भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

श्री १००८ चंद्रप्रभु दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र देहरा, तिजारा

वीर निर्वाण संवत् - 2536
मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष वि.सं. 2066 दिसम्बर 2009

मूल्य : 10/-

वर्ष : तृतीय अंक : दशम्

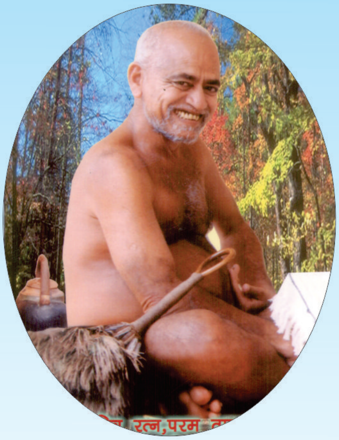

गुरू महिमा

- विनय, वात्सल्य, एकता तीनो रत्नात्रय के समान हैं, समाज की संरचना में इनका बहुमूल्य योगदान है।
- प्रेम, मैत्री, करूणा तथा आस्था समाज संगठन की आधार भूत भावनायें है।
- त्याग, तपस्या तथा निःस्वार्थ सेवा के बिना आत्मोद्धार तथा देश का उद्धार संभव नहीं।
- सबके साथ वात्सल्य, प्रेममय व्यवहार, सबका हित देखना तथा हिल मिलकर रहना ही समाजवाद है।

मुनिश्री के प्रवचन के दौरान आचार्य श्री विद्यासागर धर्मप्रभावना संघ, जयपुर का सम्मान

गौशाला के अध्यक्ष दानवीर श्री पदमराज जैन (हुळल) दावणगेरे (कर्नाटक) का सम्मान

२४.१०.०९ को डाक्टर्स अधिवेशन में डॉ. के.एम. गंगवाल का सम्मान करते हुए श्री प्रकाश पाटनी, संयोजक दि.जै.म.यु.प्र.

मुनिश्री के कर कमलों में शास्त्र भेंट करते हुए श्री राजेश जैन 'रज्जन', दमोह

भगवान महावीर आचरण संस्था समिति

रजि.नं.: 01/01/01/17654/07

कार्यालय : एम-8/4 गीतांजलि काम्प्लेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल फोन : 0755-2673820

सम्पर्क सूत्र :

महामंत्री	संयुक्त सचिव	कोषाध्यक्ष	उपाध्यक्ष	अध्यक्ष
अजित जैन	अरविन्द जैन	अविनाश जैन	राजेन्द्र चौधरी	डॉ सुधीर जैन
~ywz{ ®vv{v				9425011357

सदस्य -पवन जैन, श्रीमती संगीता जैन

संरक्षक : श्रीमती शीलरानी नायक, पनागर, श्री सुनील कुमार जैन, श्री महावीर प्रसाद जैन, सतना, श्री राजेश जैन रज्जन, श्री राजेन्द्र जैन कल्लन, दमोह, श्री अजित जैन, श्री महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल **विशेष सदस्य : दमोह :** श्री मनोज जैन दालमिल, श्री महेश जैन दिगम्बर, श्री संजीव जैन शाकाहारी, श्री तरुण सर्राफ, श्री पदम लहरी **सदस्य : जयपुर :** श्री शांतिलाल वागडिया, **भोपाल :** श्रीमती मना जैन, श्री अनेकांत जैन।

रजिस्ट्रेशन क्रं. MPHIN/2007/27127

त्रैमासिक

भाव विज्ञान

(BHAV VIGYAN)

तृतीय वर्ष
अंक दशम

शुभाशीष

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी
के धर्म प्रभावक परम शिष्य परम पूज्य
मुनिश्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज ।

● *परामर्शदाता* ●
डॉ. प्रोफेसर एल.सी. जैन
जबलपुर, मोबा.: 9425386179
पंडित मूलचंद लुहाड़िया
किशनगढ़ (राजस्थान) मोबा.: 9352088800

● *सम्पादक* ●
श्रीपाल जैन 'दिवा', भोपाल
फोन : 4221458, 9893930333, 9977557313

● *प्रबंध सम्पादक* ●
डॉ. सुधीर जैन, प्राध्यापक
F-108/34, शिवाजी नगर, भोपाल मो. 9425011357

● *सम्पादक मंडल* ●
डॉ. सी. देवकुमार, प्रमुख वैज्ञानिक, नई दिल्ली
पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)
डॉ. अजित कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
डॉ. संजय जैन, पथरिया, दमोह (म.प्र.)
डॉ. (श्रीमती) अल्पना जैन (मोदी), ग्वालियर (म.प्र.)
इंजी. महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)

● *कविता संकलन* ●
पं. लालचंद जैन 'राकेश', भोपाल

● *प्रकाशक* ●
श्रीमती सुषमा जैन धर्मपत्नी डॉ. अजित जैन
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा, भोपाल
फोन : 0755-2673820, 94256 01161

● शिरोमणी संरक्षक ●
दानवीर, किशनगढ़

● *सदस्यता शुल्क* ●

शिरोमणी संरक्षक	:	51,000
परम संरक्षक	:	21,000
सम्मानीय संरक्षक	:	16,000
संरक्षक	:	5,100
विशेष सदस्य	:	3100
आजीवन सदस्य	:	1100

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं
रचनाएँ प्रबन्ध सम्पादक के पते पर भेजें।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक — **पृष्ठ**

1. **सम्पादकीय** — श्रीपाल जैन 'दिवा' — 2
2. **जैन धर्म में कर्म व्यवस्था** — मुनि आर्जवसागर — 5
3. **विज्ञान के दर्शन में पंचम अध्याय** — लालचंद 'राकेश' — 10
4. **आचार्य विद्यासागर जी महाराज की जीवन कथा** — श्रीमती सुशीला पाटनी — 18
5. **सम्यक ध्यान शतक** — मुनि आर्जवसागर — 22
6. **आर्थिक विकास, उदारीकरण एवं वैश्वीकरण का अहिंसात्मक श्रेष्ठ जीवन शैली पर प्रभाव** — डॉ. अजित कुमार जैन — 23
7. **आधुनिक अहिंसक कैसे बने** — सुनील वेजीटेरियन — 26
8. **जीवन गीली मिट्टी** — डॉ. रमेश जैन — 27
9. **कर्म का मर्म** — लालचंद 'राकेश' — 28
10. **समाचार** — 30
11. **भावविज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता** — 31

लेखक एवं विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

सम्पादकीय

लोभ-लाभ पर लगाम

श्रीपाल जैन 'दिवा'

भगवान महावीर स्वामी के समय में हिंसा के हाहाकार के भय एवं ग्लानि के सद्भाव ने शांति सौख्य के पर्यावरण को प्रदूषित कर रखा था। 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' के हिंसक उद्घोष ने हिंसा पर वरद हस्त रख रखा था। ऐसे परिवेश में भगवान महावीर स्वामी ने ''जिओ और जीने दो'' की अमृत देशना देकर जीव मात्र के लिए अभय का सद्भाव करते हुए अहिंसा का डंका बजाया था। अहिंसा की सिंह गर्जना से हिंसक-खूँखारता दुबकी और उसका हृदय परिवर्तन होने लगा। अहिंसा की लहर चली - करुणा पर सवार होकर। घर-घर में ''जिओ और जीने दो'' का मंत्रोच्चार का सद्भाव होने लगा।

महावीर स्वामी ने तीस वर्ष की युवावस्था में जिनेश्वरी दीक्षा धारण कर बारह वर्ष की मौन आत्म साधना कर केवल ज्ञान प्राप्त किया। केवलज्ञान प्राप्ति पश्चात उन्होंने निरंतर तीस वर्षों तक आत्म कल्याण की देशना की प्रभावना की। संयम, तप, त्याग के माध्यम से अहिंसा का मार्ग बताया। भगवान महावीर के परिनिर्वाण के दो दिन पूर्व कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी की मंगल बेला में उनकी अंतिम देशना होनी थी। ऐसा 'गौतम गणधर' जी ने भक्त श्रावकों को बताया। भक्त श्रावकों ने गौतम गणधर जी से पूछा - महाराज इस मंगल अवसर पर हमें क्या करना चाहिए। गौतम गणधर जी ने उन्हें अपनी पात्रता प्रगट करने के निर्देश दिये। देशना के पश्चात कई भक्तजनों ने जिनेश्वरी दीक्षा ली व अनेक आत्म कल्याण के मार्ग की ओर उन्मुख हुए। इस त्रयोदशी को भगवान की अन्तिम देशना हुई अतः इसे 'धन्य त्रयोदशी' का नाम दिया गया। प्रतिवर्ष इस त्रयोदशी को ''धन्य त्रयोदशी'' के रूप में दीप जलाकर पर्व के रूप में मनाया जाने लगा। पर समय के कुछ अन्तराल में मुख-सुख के प्रभाव से धन्य त्रयोदशी का स्वरूप बिगड़कर धन-तेरस हो गया और अज्ञानता वश वणिक श्रावक इस पर्व को धन-तेरस के रूप में मनाने लगे। इस पर्व पर पात्रता प्रगट करने की बात गौतम गणधर जी ने कही थी। उस समय लोगों ने व्रत संयम धारण करके पात्रता प्रकट की थी। उस पात्रता को बर्त्तन रूप समझ कर बर्तन, सोना-चाँदी खरीदने का दिन समझा जाने लगा और वणिक श्रावक वर्तमान रूप में धन्य-त्रयोदशी को धन तेरस के रूप में मनाने लगे। जो कहीं से भी त्याग मार्ग/आत्म कल्याण के मार्ग से मेल नहीं खाता है। अतः धन्य त्रयोदशी के मंगल पर्व के स्वरूप पर विचार करना अनिवार्य है। इसी दिन भगवान महावीर स्वामी अंतिम देशना देकर ध्यानस्थ हो गये थे। पावानगरी के मनोहर वन में स्थित सुन्दर सरोवर के बीच मणिमय शिला पर भगवान विराजमान होकर मन वचन काय योग का निरोधकर क्रियाजित हो शुक्ल ध्यान के ध्यानी हो अन्त समय में क्षपणकर सिद्ध परमेष्ठी हो गये।

शुक्ल ध्यान धारण की महान मंगल बेला त्रयोदशी को ''ध्यान त्रयोदशी'' का नाम दिया गया और इस त्रयोदशी को भगवान महावीर स्वामी की अंतिम दिव्य देशना सुनने का अवसर भक्तजनों को प्राप्त हुआ था इसलिए उसे ''धन्य त्रयोदशी'' की संज्ञा भी दी गई। कालान्तर में यही ध्यान-त्रयोदशी और धन्य त्रयोदशी को धन तेरस कहा जाने लगा और वणिक श्रावकों ने इस मंगल तिथि को धन से जोड़कर सोना चाँदी बर्तन खरीदने का त्यौहार मान लिया। धन की पूजा में लिप्त रहने वाले लोगों ने संयम त्याग धर्म को धारण करने के दिन को धन की पूजा का दिन बना डाला। यह विचारणीय है। ध्यान त्रयोदशी या धन्य त्रयोदशी को मंगल दीप जलाकर प्रसन्नता प्रगट की जाती है वह की जावे पर संयम त्याग के मार्ग को ध्यान में रखा जावे।

कार्तिक कृष्णा अमावस्या को भगवान का परिनिर्वाण हुआ। उन्हें मोक्ष फल प्राप्त हुआ। उसकी प्रसन्नता निर्वाण पूजा कर निर्वाण लाडू चढ़ाने की परम्परा प्रारम्भ हुई। वस्तुतः निर्वाण पूजा या मोक्ष लक्ष्मी की पूजा ही की जानी चाहिए। पूजा दिन में करना ही आगम सम्मत है। अतः पूजनादि शुभ क्रियाएँ दिन में ही करना चाहिए। धन की देवी लक्ष्मी जिनकी सवारी उल्लू है की पूजा करना तो घोर अवर्णवाद है मिथ्यावाद है।

वर्तमान में भगवान के परिनिर्वाण पर प्रसन्नता प्रगट करने का पर्यावरण में प्रदूषण फैलाने वाला हिंसक तरीका प्रारम्भ हो गया है। फटाखे व बम फोड़कर प्रसन्नता प्रकट की जाती है। इससे कार्बन डाइआक्साइड व दूसरी जहरीली गैसें पर्यावरण को प्रदूषित करती हैं एवं सूक्ष्म जीवों की घोर हिंसा का ताण्डव मचता है। आग लगने एवं उपस्थित लोगों के जलने का भी भय बना रहता है। साथ ही समाज के धन का भी घोर अपव्यय होता है। अतः इस हिंसक परम्परा को तुरंत पूर्ण विराम मिलना चाहिए। अनेक मंदिरों में इस हिंसक परम्परा को विदा कर दिया गया है। यह प्रशस्त निर्णय स्वागत योग्य एवं अनुकरणीय है। घर-घर में फटाके बम फोड़ना स्वेच्छा से बन्द करना चाहिए। जिन भगवान ने कदम-कदम पर पर्यावरण की शुद्धि का ध्यान धरकर सूक्ष्म जीवों की रक्षा करने का जीवंत संदेश दिया है। प्रासुक धरती पर चार हाथ देखकर चलने की प्रशस्त ईर्या समिति का पालन विश्व के सभी धर्मों के लिये महान अहिंसा पालन का दुर्लभ मार्गदर्शन दिया है। और हम उनके परिनिर्वाण दिवस पर प्रसन्नता प्रगट करने के हिंसक तरीके अपनाये हुए हैं। यह कहीं से भी समीचीन क्रिया नहीं है। सर्वथा त्याज्य है। दीपावली को अहिंसक दीपावली बनाकर मनायें। दीपावली पर पूजा तो निर्वाण पूजा या मोक्ष लक्ष्मी की पूजा ही है। धन की देवी लक्ष्मी की पूजा करना आगम अनुकूल नहीं है। पूजा भी दिन में ही हो।

जैन धर्म के सभी तीर्थंकरों ने ऐकेन्द्रिय एवं सभी सूक्ष्म जीवों की रक्षार्थ वर्षाऋतु में चातुर्मास स्थापना कर निश्चित स्थान व क्षेत्र में गमनागमन की व्यवस्था की देशना दी है। वर्षावास में श्रमण व

श्रावक-श्राविकाएँ उपवास तप त्याग की साधना से अपनी आत्म शुद्धि की वृद्धि का लाभ लेते हैं। लोभ-लाभ की वृत्ति पर लगाम लगाने की साधना का मंगल अवसर श्रावकों को मिल जाता है। साधुओं का सानिध्य का सौभाग्य प्राप्त होता है। जल, जंगल, जमीन, सागर, पहाड़, नदी आदि प्रकृति के अंगों के साथ लोभी धन पिशाचों ने जो अपव्यवहार और अत्याचार कर छेड़छाड़ की मनमानी की है जिसके कुपरिणाम विश्व मानवता को लीलने को मुँह बाये खड़े हैं। इस सर्वनाश से बचाने हेतु तीर्थंकरो की अहिंसा देशना ही एक मात्र उपाय है। वर्तमान में दिगम्बर जैन साधु तीर्थंकरों के लघु रूप में जीवन्त हैं। उनकी देशना ही प्रकृति के प्रकोप से बचाने में सक्षम है।

विश्व के अनेक प्रगतिशील और अब विकासशील देशों में उद्योगों की स्थापना सतत की जा रही है। इन कल-कारखानों से जहरीला धुँवा परिवेश में छोड़ा जा रहा है जिससे कार्बन डाइआक्साइड, कार्बन मोनोआक्साइड एवं अन्य घातक गैसें उपस्थित रहती हैं जो परिवेश के ताप में वृद्धि कर रही हैं। जिसे ग्लोबल वार्मिंग की संज्ञा दी जा रही है। इस ग्लोबल वार्मिंग से धरती का पर्यावरण गर्म हो रहा है। परिणाम स्वरूप उत्तरी-दक्षिणी ध्रुवों की बर्फ पिघल रही है। बर्फ की इन बड़ी-बड़ी चट्टानों को ग्लेशियर कहते हैं। ग्लेशियर के पिघलने से समुद्री जल का सतह बढ़ने लगा है। जिसके परिणाम स्वरूप समुद्री किनारे के शहर एवं समुद्री द्वीप टापुओं के जल मग्न होने का खतरा मँडरा रहा है। प्रकृति के मनमाने दोहन से खतरनाक सर्वनाशी परिणाम सामने आ रहे हैं। इन पर नियंत्रण लोभ-लाभ के सोच पर लगाम लगाने से व प्रकृति की छेड़छाड़ बन्द करने से ही सम्भव है। एक ताजा उदाहरण देखिये। बिट्रेन से दूर १६ दैत्याकार विशाल मालवाही जहाजों को लंगर डालकर समुद्र में खड़ा कर दिया गया है जिनमें क्रूडआइल आदि खनिज तेल भरा है। भाव बढ़ने की आशा में इन धन पिशाचों ने यह खेल खेला है। इन जहाजों से प्रदूषण इतना फैल रहा है कि केवल १६ जहाजों का प्रदूषण विश्व की सारी कारों से फैलने वाले प्रदूषण से भी अधिक है। इन लोभी लुच्चे धन पिशाचों की सर्वनाशी जिह्वा मानवता का खून पीने को कैसे लपलपा रही है। इनकी धन की भूख मानवता को खाने को तैयार है। इस पर पाबंदी कैसे लगे। इनका उपाय तीर्थंकरों की अहिंसा देशना में ही है। जिओ और जीने दो के परिपालन में ही है। लोभ-लाभ की तीव्र लालसा एवं आसक्ति पर अपरिग्रह का अस्त्र ही विजय प्राप्त कर सकता है। वह अस्त्र दिगम्बर जैन साधुओं के पास है। जिसका वितरण सतत चल रहा है। परन्तु इस वितरण गंगा के निकट आने का डुबकी लगाने का सौभाग्य उन धन पिशाचों को प्राप्त हो तब बात बने। इसमें वर्तमान की दूर संचार व्यवस्था-दूरदर्शन की सुविधा उनको निकट लाने और हृदय परिवर्तन में सहयोग कर सकती है-कर भी रही है।

विश्व के सभी लोभी बन्धु एवं परिग्रह में घोर आसक्ति रखने वाले भाइयों को सद्बुद्धि प्राप्त हाने की मंगल कामना करते हुए विराम।

जैन धर्म में कर्म व्यवस्था

(मुनिश्री आर्जवसागरजी महाराज के प्रवचन पर आधारित)

गतांक से आगे ....

प्रत्येक संसारी प्राणी को ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, आदि अष्ट कर्म विभिन्न प्रकार के फल देकर सुखी-दुःखी करते रहते हैं। संसार में जो कर्माधीन सुख होता है वह विनश्वर व दुःख मिश्रित होने से दुःख सदृश या सुखाभास ही कहा गया है। इन्द्रिय विषय के सुख के सन्दर्भ में आचार्य कुन्द-कुन्द स्वामी प्रवचनसार ग्रंथ की गाथा ७६ में कहते हैं -

सपरं बाधा सहिदं विच्छिण्णं बंधकारणं विसमं ।
जं इन्द्रियेहिं लद्धं तं सौख्यं दुःखमेव तहा ।।

जो इन्द्रियों से उत्पन्न सुख है वह पराधीन, बाधा से रहित स्वल्प काल में ही समाप्त हो जाने वाला पाप कर्म के बन्ध का कारण और परिवर्तनशील (क्षणभंगुर) रूप होने से दुःख ही है, ऐसा जानना चाहिए।

जैन कर्म शास्त्र (सिद्धांत) की दृष्टि से द्रव्यकर्म और भावकर्म ऐसे दो प्रकार के कर्म बतलाये हैं। द्रव्य कर्म के मूल आठ भेद हैं जो प्राणियों को अनुकूल और प्रतिकूल फल प्रदान करते हैं। द्रव्यकर्म के वे आठ भेद इस प्रकार हैं - ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय। इनमें से ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय ये चार कर्म घातिया कर्म हैं क्योंकि ये आत्मा के अनुजीवी गुणों का घात करने में निमित्त बनते हैं। शेष चार कर्म अघातिया कर्म हैं क्योंकि ये आत्मा के प्रतिजीवी गुणों का घात करने में निमित्त बनते हैं, ये आत्मा के निजगुण का घात नहीं करते हैं। जब घातिया कर्म नष्ट हो जाते हैं तब आत्मा केवलज्ञान, केवलदर्शन का धारक अरिहन्त बन जाता है और जब अघातिया कर्म नष्ट हो जाते हैं तब विदेह, सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो जाता है। द्रव्यकर्म आठ प्रकार के कहे हैं जो इस प्रकार हैं -

ज्ञानावरण कर्म - यह कर्म ज्ञान की उन्नति में बाधा उत्पन्न करता है। जिस कर्म के उदय के निमित्त से आत्मा की ज्ञान ज्योति प्रकट नहीं हो पाती, जो कभी न्यून कभी अधिक हुआ करती है। जगत में बौद्धिक विभिन्नता का कारण ज्ञानावरण कर्म है। इसके पाँच भेद हैं - मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण। प्रथम चार कर्म प्रकृतियाँ देशघाति हैं और केवलज्ञानावरण कर्मप्रकृति सर्वघाति है। ज्ञानावरण कर्म की अधिकतम स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम और न्यूनतम अन्तर्मुहुर्त की है। ज्ञानावरण कर्म के आस्रव व बंध के प्रमुख कारण इस प्रकार हैं -

१. मोक्षमार्ग के साधन स्वरूप तत्त्व ज्ञान का गुणगान या अन्य ज्ञान के धारक ज्ञानी पुरुष का नहीं सुहाना। २. ज्ञान या मोक्षमार्ग (रत्नत्रय मार्ग) के प्रदाता का नाम छुपाना । ३. तत्त्व ज्ञानी होते हुए भी, अपना वह देने योग्य तत्त्व ज्ञान, योग्य पात्र को भी किसी स्वार्थवश नहीं देना। ४. ज्ञान एवं ज्ञान के साधनों में विघ्न डालना । ५. ज्ञान के क्षेत्र में दूसरे की वृद्धि न सुहाने से शरीर या वचनों से उसके सच्चे ज्ञान की प्रसिद्धि को रोकना । ६. समीचीन ज्ञान में दूषण लगाना। ७. शास्त्रों को बेचकर अपनी आजीविका चलाना । ८. शास्त्र या उसके उपदेश का अनादर करना । ९. मिथ्या शास्त्र का पढ़ना-पढ़ाना इत्यादि ।

दर्शनावरण कर्म - यह आत्मा की दर्शन शक्ति पर आवरण करने वाला, दर्शन में बाधक बनने वाला दर्शनावरण कर्म है। दर्शनावरण कर्म वस्तुओं के सामान्य बोध को रोकता है, पदार्थों को देखने में बाधा डालता है। इसके नौ भेद हैं - चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण, केवलदर्शनावरण, निद्रा, निद्रा-निद्रा, प्रचला, प्रचला-प्रचला और स्त्यानगृद्धि। चक्षु, अचक्षु, अवधिदर्शनावरण ये देशघाती हैं और शेष छह सर्वघाती हैं। दर्शनावरण कर्म की उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम और न्यूनतम अन्तर्मुहुर्त की है। दर्शनावरण कर्म के आस्रव व बन्ध के प्रमुख कारण भी ध्यान देने योग्य हैं -

१. सच्चे (वीतरागी) देव-शास्त्र-गुरु और उनका गुणगान नहीं सुहाना । २. सद्दर्शन के मार्ग प्रदर्शक का नाम छुपाना । ३. दर्शन सुलभ होते हुए भी, वह देखने योग्य सद्दर्शन योग्य पात्र को भी किसी स्वार्थवश नहीं करने देना । ४. सद्दर्शन या उस दर्शन के साधनों में विघ्न डालना । ५. जिसको सच्चा दर्शन सुलभ है उसकी यह दर्शन की सुलभता न सुहाने से शरीर एवं वचनों से उसके सच्चे दर्शन में दोष लगाना । ६. सच्चे वीतरागता रूप दर्शन के साधनों अर्थात् जिनबिम्ब आदिक के व्यापार से अपनी आजीविका चलाना । ७. वीतराग दर्शन एवं उसके उपदेश का अनादर करना । ८. वीतराग के अलावा सरागता की पूजा वंदन आदि क्रिया करना । ९. अति निद्रा लेना । १०. मिथ्या तीर्थों की प्रशंसा करना । ११. सच्चे तपस्वियों से ग्लानि करना । १२. देखने के साधन-चक्षु आदिक का नष्ट करना इत्यादि ।

वेदनीय कर्म - जीव को स्वाभाविक निर्मल आत्मीय आनन्द से वंचित कर अनुकूल अथवा प्रतिकूल पदार्थों में इन्द्रियों के द्वारा सुख-दुःख का अनुभव कराने वाला वेदनीय कर्म है। इसके दो भेद हैं - सातावेदनीय कर्म और असातावेदनीय कर्म। प्रथम सातावेदनीय कर्म सुख की प्राप्ति में निमित्त होता है और दूसरा असातावेदनीय कर्म दुःख की प्राप्ति में निमित्त होता है। वेदनीय कर्म की उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम, न्यूनतम बारह मुहुर्त है। वेदनीय कर्म के आस्रव व बन्ध के प्रमुख कारण भी समझने योग्य हैं -

अ. असाता वेदनीय सम्बन्धी कारण -

१. दु:ख (पीड़ा) रूप परिणाम का होना। २. शोक (इष्ट वस्तु के वियोग में विकलता) का होना। ३. ताप (अपवाद आदिक से मन की खिन्नता) का होना। ४. आक्रन्दन (आँसू बहाते हुए खुलकर रोने रूप) का होना। ५. वध (प्राणों का घात कर देने रूप) का होना। ६. परिवेदन (संक्लेश परिणामों के साथ गुणानुस्मरण करते हुए रोने रूप) का होना। ७. ऊपर कहे गए इन दु:खादिकों को दूसरों को भी उत्पन्न करना। ८. विश्वासघात करना। ९. व्रतों का भंग करना इत्यादि।

ब. साता वेदनीय सम्बन्धी कारण -

१. प्राणी अनुकम्पा रखना। २. व्रती सेवा करना। ३. सत्पात्र दान देना। ४. मुनिव्रत पालन करना। ५. अणुव्रत पालन करना। ६. क्षमा भाव रखना। ७. निर्लोभी वृत्ति रखना। ८. जिनेन्द्र देव पूजन करना। ९. तपस्वियों की वैयावृत्ति (सेवा) करना। १०. विनयशीलता रखना। ११. सुखकर सम्यक्वचन बोलना इत्यादि।

मोहनीय कर्म - मोहनीय कर्म अपने स्वरूप को भुलाकर पर में अपनत्व की मूढ़बुद्धि उत्पन्न कराता है। यह त्याग संयम में बाधक बनता है। इस कर्म के कारण जीव मोह ग्रस्त होकर संसार में भटकता है। समस्त दु:खों की प्राप्ति मोहनीय कर्म से ही होती है। इसलिए इसे अरि अर्थात् शत्रु भी कहते हैं। मोहनीय कर्म सभी कर्मों का स्वामी है, इसके सद्भाव होने पर किसी कर्म का अभाव नहीं होता और मोहनीय कर्म के नष्ट होने पर शेष कर्म सरलता से नष्ट होते जाते हैं। मोहनीय कर्म के उदय से जीव को तत्त्व-अतत्त्व का भेद-विज्ञान नहीं हो पाता। यह कर्म, स्व-पर विवेक में बाधा डालता है। दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय कर्म के भेद से इसके दो भेद हैं। दर्शनमोहनीय के तीन भेद हैं। चारित्रमोहनीय के पच्चीस भेद (कषाय सम्बन्धी सोलह तथा नोकषाय सम्बन्धी नौ भेद) से मोहनीय कर्म के कुल अट्ठाईस भेद हो जाते हैं। मोहनीय कर्म की उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम तथा न्यूनतम अन्तर्मुहुर्त है। मोहनीय कर्म के आस्रव व बन्ध के प्रमुख कारणों से भी बचना अत्यन्त आवश्यक है -

अ. दर्शनमोहनीय सम्बन्धी कारण -

१. केवली कवलाहारी होते हैं, इत्यादिक कहते हुए केवली पर दूषण लगाना। २. शास्त्र में माँसाहार को निर्दोष कहा है, इत्यादिक कहते हुए सच्चे शास्त्र पर दूषण लगाना। ३. साधु अशुचिमय होते हैं, इत्यादिक कहते हुए सच्चे (दिगम्बर जैन) साधुओं पर दूषण लगाना। ४. जिन धर्म में कोई सार नहीं एवं इसका पालन करने से लोग दुर्गति में जाएंगे इत्यादिक कहते हुए धर्म की झूठी निंदा करना। ५. देव गति के देव सुरा (शराब) का और माँस का सेवन करते हैं, इत्यादिक कहते हुए देवों पर झूठा अपवाद लगाना। ६. असत्य या असंयम के मार्ग को मोक्षमार्ग कहना इत्यादिक।

ब. चारित्र मोहनीय कर्म सम्बन्धी कारण -

१. क्रोधादिक तीव्र कषाय करना। २. सच्चे तपस्वियों की निंदा करना। ३. जिन-धर्म से बाह्य (भिन्न व विपरीत) लिंग को धारण करना। ४. सत्य-धर्म का उपहास करना। ५. मनुष्यों की हँसी मजाक उड़ाना। ६. राग को बढ़ाने वाली कुचेष्टा करना। ७. व्रत और शील के पालन में रुचि न रखना। ८. पापी लोगों की संगति करना। ९. दूसरों के सुख के साधन नष्ट करना। १०. हमेशा शोक में लीन रहना। ११. कष्टों से भय रूप परिणाम रखना। १२. सुखकर धर्माचार से घृणा करना। १३. अपवाद में रुचि रखना। १४. असत्य बोलने की आदत रखना। १५. दूसरों के दोष ढूँढ़ने की आदत रखना। १६. स्त्रियों में रागादिक युक्त परिणाम होना। १७. परस्त्री सेवन करना। १८. बलात्कार करना। १९. गुप्त इन्द्रियों का विनाश करना इत्यादि।

आयुकर्म - यह कर्म किसी एक गति में जीवनपर्यन्त तक रोके रखता है। जीवों के जीवन अवधि का नियामक कर्म आयु कर्म है। इसके अस्तित्व से प्राणी जीवित रहता है और क्षय होने पर मरण को प्राप्त होता है। अपवर्तनीय और अनपवर्तनीय इन दो रूपों में आयु उपलब्ध होती है। किसी भी कारण से आयु कर्म का मध्य में ही क्षय न होना अनपवर्तनीय है। किसी वेदना, रक्त-क्षय आदि बाह्य निमित्तों से आयु कर्म का बीच में उदीरणा द्वारा क्षय होना अपवर्तन है। आयु कर्म होने का अभिप्राय यह नहीं है कि आयु कर्म का कुछ भाग बिना भोगे ही नष्ट हो जाता है बल्कि आयु कर्म के जो प्रदेश धीरे-धीरे बहुत समय में भोगे जाने वाले थे, वे उदीरणा पूर्वक अल्प काल में भोग लिये गये। लोक व्यवहार में इसको अकाल मृत्यु कहते हैं। अपवर्तन केवल मनुष्य और तिर्यंच में ही होता है, देव, नारकी और भोग भूमिज मनुष्य एवं तिर्यंच और तद्भव मोक्षगामी तीर्थंकर आदिक चरम शरीरी अवस्थाओं में अकाल मरण नहीं होता।

आयु कर्म सदैव नहीं बंधता है, इसके बंध का विशेष नियम है। नारकी, देव तथा भोग भूमियाँ जीव अपनी आयु के अन्तिम छह माह में तथा शेष मनुष्य व तिर्यच जीवन की दो तिहाई आयु व्यतीत होने पर ही आयु कर्म बंधता है, वह भी अन्तर्मुहुर्त तक। एक मनुष्य, तिर्यंच के जीवन में ऐसे आठ अवसर आते हैं जिनमें वह आयु बांधने के योग्य होता है। इनके मध्य वह आयु का बंध कर ही लेता है अर्थात् मृत्यु से अन्तर्मुहुर्त पूर्व तक आयु का बंध हो ही जाता है। कोई भी जीव नवीन आयु का बंध किये बिना नवीन भव को प्राप्त नहीं होता। आयु का बंध न होने पर जीव आठों कर्मों का क्षय करके मुक्त हो जाता है। आयु कर्म के चार भेद हैं - नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु और देवायु। आयु कर्म की उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागरोपम है और न्यूनतम अन्तर्मुहुर्त है। आयु कर्म के आस्रव व बन्ध के प्रमुख कारण इस प्रकार हैं -

अ. नरकायु सम्बन्धी कारण -

१. बहुत आरम्भ (हिंसा का कार्य) करना। २. बहुत परिग्रह संग्रह करना। ३. दूसरों को दुःख देने वाली क्रूर प्रवृत्ति करना। ४. अत्यन्त आसक्ति-सह इन्द्रिय विषयों का सेवन करना। ५. सच्चे तपस्वियों की अविनय करना। ६. मुनियों पर उपसर्ग करना। ७. आयतनों को तोड़ना (नष्ट करना)। ८. अति अशुभ लेश्या रूप परिणाम होना। ९. रौद्र ध्यानी होना इत्यादि।

ब. तिर्यंचायु सम्बन्धी कारण -

१. मायाचार करना। २. धर्मोपदेश में मिथ्या कथन मिलाना। ३. मिथ्यात्व प्रचार करना। ४. नकली वस्तु को असली वस्तु कहकर देना। ५. कुशीलमय जीवन बिताना। ६. छल-कपट भाव रखकर विश्वासघात करना। ७. मरण समय अशुभ आर्त्त ध्यान रूप परिणामों का होना इत्यादि।

स. मनुष्यायु सम्बन्धी कारण -

१. अल्प आरम्भ करना। २. अल्प परिग्रह का होना। ३. स्वभाव से विनम्र होना। ४. भद्र प्रकृति का होना। ५. सरल व्यवहारी होना। ६. तनु कषाय परिणामी होना। ७. वीतरागी का पूजक, सेवक होना। ८. सत्पात्र दानी होना। ९. मरण समय संक्लेश रूप परिणाम का न होना इत्यादि।

द. देवायु सम्बन्धी कारण -

१. संयम रखना। २. महाव्रतों का पालन करना। ३. अणुव्रतों का पालन करना। ४. सहनशीलता का होना। ५. तप धारण करना। ६. सम्यक्त्व धारण करना। ७. सच्चे धर्म का उपासक होना। ८. सुपात्र को भक्ति पूर्वक दान देना। ९. आयतनों की सेवा करना इत्यादि।

विशेष -

क. वैसे तो सम्यग्दर्शन के साथ महाव्रत मोक्ष के (निर्वाण के) कारण हैं लेकिन उन महाव्रतों के साथ योग्य द्रव्य, क्षेत्रादिक का अभाव होता है तो वे स्वर्ग के कारण हैं।

ख. सम्यग्दृष्टि मनुष्य को अहमिन्द्र या सौधर्म इन्द्र आदिक देवों की ही आयु का बन्ध होता है। उस सम्यग्दृष्टि को कभी भी उस सम्यक्त्व के काल में वैमानिक सम्बन्धी देवियों और भवनत्रिक (भवनवासी, व्यन्तरवासी, और ज्योतिष्क) सम्बन्धी देव तथा देवियों की आयु का बन्ध नहीं होता।

ग. देवों के नरकायु एवं देवायु का तथा नारकियों के भी देवायु एवं नरकायु का बंध नहीं होता है।

क्रमशः............

संकलन : डॉ. श्रीमती अल्पना जैन (मोदी), ग्वालियर

विज्ञान के दर्पण में पंचम अध्याय

- पं. लालचन्द्र जैन ''राकेश''

आचार्य श्री उमास्वामी और उनका तत्वार्थ सूत्र -

आचार्य श्री उमास्वामी जी मोक्षशास्त्र अपरनाम ''तत्त्वार्थ सूत्र'' के प्रणेता हैं। आप ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने सबसे कम लिखकर सबसे अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की है। आप आचार्य समन्त भद्र से पूर्व प्रथम शताब्दी के विद्वान् हैं।

आपका यह ग्रन्थ जैन साहित्य का आद्यसूत्र ग्रंथ तो है ही संस्कृत जैन साहित्य का भी आद्य ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ इतना सुसम्बद्ध और प्रामाणिक सिद्ध हुआ है कि भगवान महावीर की द्वादशांग वाणी की तरह ही यह जैन दर्शन का प्रकाश स्तम्भ बन गया है।

यह ग्रन्थराज आकाश के समान विस्तृत, सागर के समान गंभीर, अणु के समान सूक्ष्म, आत्मा के समान गूढ़, पवित्र और रहस्यपूर्ण है।

हिन्दुओं में ''गीता'' का, ईसाइयों में ''बाईबिल'' का, सिक्खों में ''गुरुग्रन्थ साहिब'' का एवं मुसलमानों में ''कुरान शरीफ'' का जो महत्व है वही महत्व जैन परम्परा में ''मोक्षशास्त्र/तत्त्वार्थ सूत्र'' का है।

यह एक कालजयी अजर-अमर रचना है और इसके कारण आचार्य उमास्वामी का नाम भी ''यावच्चन्द्र दिवाकरौ'' अजर-अमर है।

इस रचना में आचार्य श्री ने प्रयोजन भूत जीवादि सात तत्त्वों का वर्णन करते हुए पथभ्रान्त संसारी पुरुषों को रत्नत्रय ही मोक्ष का सच्चा मार्ग बतलाया है।

तत्त्वार्थ सूत्र का पंचम अध्याय -

भूमिका

''तत्त्वार्थ सूत्र'' के आरम्भिक चार अध्यायों में जीव तत्त्व की विस्तृत विवेचना आचार्य श्री कर चुके हैं, इस पंचम अध्याय में अजीव तत्त्व का विस्तृत वर्णन किया गया है। इसमें कुल 42 सूत्र हैं। अध्याय का 5, और सूत्रों के 42 अंक, इनका विशेष अर्थ हैं।

(अ) इन 42 अर्थात् 4+2 अंकों का भी अपना महत्व है। ये दर्शाते हैं कि द्रव्य 6 हैं जैसा कि आचार्य श्री ने अजीव काया धर्माधर्माकाशपुद्‌गलाः ॥ 1 ॥, जीवाश्च ॥ 3 ॥, कालश्च ॥ 39 ॥, द्रव्याणि ॥ 2 ॥ इन सूत्रों द्वारा - धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्‌गल जीव और काल- इन 6 द्रव्यों का नामोल्लेख किया है। द्रव्याणि सूत्र द्वारा यह कहा है कि ये 6 द्रव्य हैं।

(ब) 4+2 में 4 का अंक यह बतलाता है कि ''अजीव काया धर्माधर्माकाश पुद्‌गलाः''

से 4 द्रव्य अजीव हैं और कायवान् अर्थात् बहुप्रदेशी हैं जबकि 2 का अंक काल और जीव इन दो द्रव्यों की भिन्नता प्रकट करता है। वह कहता है कि जीव यद्यपि बहुप्रदेशी है किन्तु अजीव नहीं है और काल अजीव है किन्तु बहुप्रदेशी नहीं है। अतः 4 द्रव्य तो अजीव और बहुप्रदेशी एक जैसे हैं जबकि जीव और काल दो द्रव्य उनसे भिन्न और परस्पर से भी भिन्न हैं। 2 मूलभूत तत्त्व दो भागों में विभाजित है - एक जीव तत्त्व और दूसरा अजीव या जड़ तत्त्व।

(स) अध्याय 5, की संख्या यह संकेत करती है कि - 1. इस अध्याय में मुख्यतः पंचास्तिकाय का वर्णन है। 2. अजीव द्रव्य 5 हैं। 3. जो इनको पर समझ लेगा वह पंचमगति पावेगा।

यह अध्याय अमूल्य सूत्र-रत्नों का खजाना है :-

यह अध्याय अमूल्य सूत्र-रत्नों का खजाना है। इसके एक-एक सूत्र में जो अमृत भरा है यदि भव्य पुरुष उसे आत्मसात् कर ले तो वह निश्चय ही आत्मा-परमात्मा, जन्म-मृत्यु, स्वर्ग-मोक्ष, सुख-दुख, संयोग-वियोग, पाप-पुण्य, उतार-चढ़ाव के तनावों से मुक्त होकर, राग-द्वेष से परे रह, समता रस का पान करता हुआ मोक्ष को प्राप्त कर सकता है।

इस खजाने का पहले एक सूत्र-रत्न प्रस्तुत है और वह है- द्रव्याणि ॥ 2 ॥ अन्य 2-4 सूत्र जो इसकी प्रभा को प्रकाशित करते हैं वे हैं - सत् द्रव्य लक्षणम् ॥ 29 ॥, उत्पाद व्यय ध्रौव्ययुक्तं सत् ॥ 30 ॥, गुण पर्ययवद् द्रव्यम् ॥ 38 ॥, तद् भावः परिणाम ॥ 42 ॥, तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ 31 ॥

जो त्रिकाल अपने गुण-पर्याय को प्राप्त होता है उसे द्रव्य कहते हैं। द्रव्य की द्रव्यता यही है कि वह अपनी त्रिकाल में होने वाली पर्यायों में व्यापक रहे। पदार्थ न तो केवल पर्याय रूप ही है और न केवल नित्य ही है किन्तु वह परिवर्तनशील होकर भी अनादि-अनिधन है, नित्य है।

द्रव्यों में जो परिणमन होता है वह अपने-अपने रूप ही होता है। एक पदार्थ दूसरे रूप नहीं हो जाता, वह पदार्थ अपने रूप ही रहता है।

जगत् के सभी पदार्थ स्व की अपेक्षा सत् हैं। इन्हें किसी ने बनाया नहीं है। अर्थात् ईश्वर जगत् का कर्ता हरता या धारणकर्ता नहीं है। प्रत्येक पदार्थ उत्पाद-व्यय एवं ध्रौव्य से युक्त है। इसे हम एक वाक्य में (आना-जाना लगा हुआ है-आ. विद्यासागर) स्पष्ट कर सकते हैं कि प्रत्येक पदार्थ में प्रतिक्षण नई पर्याय पैदा होती है, उसी क्षण पूर्व पर्याय नष्ट होती है किन्तु पदार्थ वही बना रहता है। अर्थात प्रत्येक पदार्थ अपने द्रव्य और गुण की अपेक्षा नित्य है और पर्याय की अपेक्षा अनित्य है।

आज का विज्ञान भी इसी तथ्य की घोषणा करता है कि यह विश्व तीन वात-वलयों के सहारे टिका है, इनका कोई निर्माता या रक्षणकर्ता ईश्वर नाम की शक्ति नहीं है।

जैन दर्शन के इस सिद्धान्त का प्रतिपादन महर्षि पतञ्जलि ने भी अपने ''महाभाष्य'' में एवं मीमांसा दर्शन के पारगामी महामति कुमारिल ने भी ''मीमांसाश्लोकवार्तिक'' में किया है। (जैनधर्म

93-94) निष्कर्ष यह है कि जैन दर्शन में द्रव्य ही एक तत्त्व है, जो 6 प्रकार का है और वह प्रति समय उत्पाद व्यय और ध्रौव्य स्वरूप है। अतएव वह द्रव्य दृष्टि से नित्य है और पर्याय दृष्टि से अनित्य है।

जैन धर्म पृष्ठ-95

आज का विज्ञान भी जैन दर्शन के इस सिद्धान्त को स्वीकार करता है। उसके अनुसार Permanency with change is natures law. अर्थात् स्थिरता के साथ बदलते रहना यह प्रकृति का नियम है। संसार में न तो कोई नया पदार्थ पैदा होता है और न कोई पदार्थ नष्ट ही होता है किन्तु उसकी अवस्थाएँ बदलती रहती हैं।

यदि हम यह समझ लें कि जीव एक द्रव्य है। वह ''सत्'' स्वभावी है, अनादि-अनिधन है, नित्य है। जन्म और मृत्यु तो पर्याय का बदलना मात्र है तो फिर हम हर्ष और विषाद से परे रहकर सुख मय जीवन व्यतीत कर सकते हैं। कहा भी है -

वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुख संकट सहा करें।

द्रव्य की नित्यता और पर्याय की अनित्यता का प्रतिपादन आचार्य समन्तभद्र ने निम्नांकित दृष्टान्त द्वारा किया है जिससे द्रव्य की त्रयात्मकता सिद्ध होती है :-

घट मौलिस्वर्णार्थी नाशोत्पादस्थितिष्वयम् ।
शोक प्रमोदमाध्यस्थ्यं जनोंयाति सहेतुकम् ।।

आप्तमीमांसा ॥ 69 ॥

''एक राजा के एक पुत्र है और एक पुत्री । राजा के पास एक सोने का घड़ा है। पुत्री उस घट को चाहती है किन्तु राजपुत्र उस घट को तोड़कर उसका मुकुट बनवाना चाहता है। राजा पुत्र के लिये घट को तुड़वाकर उसका मुकुट बनवा देता है। घट के नाश से पुत्री दुखी होती है, मुकुट के उत्पाद से पुत्र प्रसन्न होता है और चूँकि राजा स्वर्ण का इच्छुक है जो कि घट टूट कर मुकुट बन जाने पर भी कायम रहता है, अतः उसे न शोक होता है और न हर्ष। अतः वस्तु त्रयात्मक (तीन रूप) है।''

''निष्कर्ष यह है कि जैन दर्शन में द्रव्य ही एक तत्व है, जो 6 प्रकार का है और वह प्रति समय उत्पाद-व्यय और ध्रौव्य स्वरूप है। अतएव तत्त्व द्रव्य से नित्य है और पर्याय दृष्टि से अनित्य है।''

(4) अब हम एक और अनमोल, अप्रतिम सूत्र-रत्न को लेते हैं - रूपिणः पुद्गलाः ॥ 5 ॥ अर्थात् पुद्गल द्रव्य रूपी यानी मूर्तिक है।

यहाँ पर रूपी कहने से रूप के साथ-साथ रहने वाले स्पर्श-रस-गंध सभी इन्द्रिय ग्राह्य गुणों को भी लेना चाहिए क्योंकि ये चारों गुण साथ ही रहते हैं। ये सब गुण पुद्गल में पाये जाते है इसलिए पुद्गल ही मूर्त है। इसे छोड़कर शेष सब द्रव्य अमूर्त है।

यह बात उल्लेखनीय है कि जैनदर्शन में पुद्‌गल शब्द का प्रयोग बिल्कुल अनोखा है, अन्य दर्शनों में इसका प्रयोग नहीं पाया जाता। ''पूरयंति गलयंति इति पुद्‌गलाः'' अर्थात् (पुद्+गल) यानी मिल जाना और बिछुड़ जाना। तात्पर्य यह है कि जिसमें पूरण और गलन (संघात और भेद) द्वारा नई पर्यायों का प्रादुर्भाव होता है उसे पुद्‌गल कहते हैं।

''विज्ञान'' की भाषा में इसे फ्यूजन व फिशन (Fusion and Fission) या इन्टिग्रेशन व डिसइन्टिग्रेशन (Integration and disintegration) कहते हैं। एटम बम जो फिशन बम और हाइड्रोजन बम को फ्यूजन बम इसी कारण कहा गया है। एटम बम में एटम के टुकड़े-2 हो जाते हैं तब शक्ति उत्पन्न होती है और हाइड्रोजन बम में एटम परस्पर मिलते हैं तब उसमें शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। स्पर्श गुण की पर्याय की विचित्रता के कारण मिलना-बिछुड़ना पुद्‌गल में ही होता है। इसलिए जब उसमें स्थूलता आती है तब वह पुद्‌गल द्रव्य इन्द्रियों का विषय बनता है।

(5) आधुनिक विज्ञान पदार्थों के दो भेद करता है मैटर (Matter) और एनर्जी (Energy) किन्तु जैन दर्शन के पुद्‌गल शब्द में मैटर और एनर्जी दोनों संगृहीत हो जाते हैं। अतः जो विद्वान् परमाणु सम्बंधी आधुनिक खोजों से परिचित हैं वे पुद्‌गल शब्द के चुनाव की प्रशंसा ही करते हैं - पं. कैलाशचन्द्र।

(6) न्याय दर्शनकार पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और जुदा-जुदा द्रव्य मानते हैं। उनकी मान्यतानुसार पृथ्वी में रूप, रस, गंध और स्पर्श चारों गुण पाये जाते हैं, जल में गन्ध के सिवा शेष तीन, अग्नि में गन्ध और रस के सिवा दो और वायु में केवल स्पर्श गुण ही पाया जाता है। अतः चारों के परमाणु जुदे-जुदे हैं। किन्तु जैन दर्शन का कहना है कि सब परमाणु एक जातीय ही हैं और उन सभी के चारों गुण पाये जाते हैं और इसलिए पृथ्वी आदि चार द्रव्य नहीं हैं किन्तु एक द्रव्य है।

आज के विज्ञान ने भी परमाणु में इलेक्ट्रोन और प्रोटोन दो तत्व माने हैं। इन्हीं दो प्रकार के परमाणु तत्वों से पृथ्वी-जल-अग्नि-वायु-तत्व बनते हैं। ये चारों भिन्न-भिन्न पदार्थ नहीं हैं किन्तु एक द्रव्य है। उदाहरण के लिये जल से मोती उत्पन्न होता है। जो पार्थिव माना जाता है, जंगल में बाँसों की रगड़ से अग्नि उत्पन्न होती है। चन्द्रकान्त मणि से जल, सूर्य कान्तमणि सेअग्नि, पानी से बिजली, ऑक्सीजन-हाइड्रोजन गैसों के मिलने से जल उत्पन्न हो जाता है।

(7) इसी क्रम से परमाणु ''नाणोः'' के सम्बंध में चर्या करना मैं उपयुक्त समझता हूँ। ''आधुनिक रसायन शास्त्र में जो एटम माने गये हैं वे जैन परमाणुओं के समकक्ष नहीं हैं। यद्यपि एटम का मतलब आरम्भ में यही लिखा गया था कि जिसे विभाजित नहीं किया जा सकता। तथापि अब यह प्रमाणित हो गया है कि एटम, प्रोटोन, न्यूट्रोन और इलेक्ट्रोन का एक पिण्ड है। परमाणु तो वह मूल कण है जो दूसरों के मेल के बिना स्वयं कायम रहता है।''

इस प्रकार हम देखते हैं कि जैन दर्शन/जैन विज्ञान के सामने आधुनिक विज्ञान बहुत बौना है।

(8) पुद्गल द्रव्य की अनेक पर्यायें होती हैं। जिनका आचार्यश्री ने ''शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तम-छाया-तपः-उद्योतवन्तश्च'' सूत्र द्वारा उल्लेख किया है। अन्य दार्शनिकों ने शब्द को आकाश का गुण माना है किन्तु जैन दार्शनिक उसे पुद्गल द्रव्य की पर्याय मानते हैं। पंचास्तिकाय में कहा है कि ''शब्द स्कन्ध से उत्पन्न होता है। अनेक परमाणुओं के बंध विशेष को स्कन्ध कहते हैं। उन स्कन्धों के परस्पर में टकराने से शब्दों की उत्पत्ति होती है। जैनों का कहना है कि यदि शब्द आकाश का गुण है, जो कि अमूर्तिक है, तो उसका ग्रहण मूर्तिक इन्द्रिय से नहीं हो सकता। जबकि इन्द्रिय से ग्रहण होना, टकराना, रोका जाना, टेलीफोन एवं ग्रामोफोन में पकड़ा जाना प्रत्यक्ष देखा जाता है। शब्द गतिमान भी है। आधुनिक विज्ञान भी शब्द में गति मानता है।'' इस प्रकार हम देखते हैं कि जैन दर्शन के निष्कर्ष कि शब्द पौद्गलिक है, पूर्ण वैज्ञानिक है। आज का विज्ञान उन निष्कर्षों की पुष्टि करता है।

(9) इस खजाने के कुछ और रत्न हैं जिनका प्रदर्शन करना मैं आवश्यक समझता हूँ। जैसे-

स्निग्धरूक्षत्वाद् बन्धः ॥ 33 ॥, न जघन्यगुणानाम् ॥ 34 ॥, गुणसाम्ये सदृशाम् ॥ 35 ॥, द्व्याधिकादि गुणानां तु ॥ 36 ॥, बन्धेधिकौ पारिणामिकौ च ॥ 37 ॥ ये पंच रत्न ऐसे है जिनके माध्यम से आचार्य श्री ने अनेक वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक धार्मिक एवं सामाजिक तथ्यों की स्थापना की है।

इन सूत्रों में बन्ध के स्वरूप का विश्लेषण बड़ी बारीकी से किया गया है। इनमें बताया गया है कि स्निग्ध और रूक्ष गुण के निमित्त से ही परमाणुओं का बन्ध होता है। परमाणु में अन्य भी अनेक गुण होते हैं, किन्तु बंध कराने में कारण केवल दो ही गुण हैं - स्निग्धता-चिक्कणता और रूक्षता-रूखापन।

स्निग्ध गुण वाले परमाणुओं का भी बंध होता है, रूक्ष गुण वाले परमाणुओं का भी बंध होता है और स्निग्ध-रूक्ष गुण वाले परमाणुओं का भी बंध होता है किन्तु जघन्य गुण वालों का बंध नहीं होता और न समान गुण वालों का ही बंध होता है, क्योंकि इस प्रकार के गुणवाले परमाणु यद्यपि परस्पर में मिल सकते हैं, किन्तु स्कंध को उत्पन्न नहीं कर सकते, अतः दो अधिक गुण वालों का ही परस्पर में बंध होता है, क्योंकि अधिक गुण वाला परमाणु अपने से दो कम गुणवाले परमाणु से मिलकर एक तीसरी अवस्था धारण करता है, इसी का नाम बंध है। जैनधर्म पृष्ठ-105

उदाहरण के लिए H_2O अर्थात् ऑक्सीजन और हाइड्रोजन नामक दो हवाएँ है जो परस्पर में मिलकर पानी का रूप धारण कर लेते हैं। इसी तरह कपूर, पीपरमेण्ट और सत अजवायन परस्पर में मिलकर एक द्रव औषधि ''अमृतधारा'' का रूप धारण कर लेते हैं । यह बंध है।

यदि दो से अधिक या कम गुणावालों का भी बन्ध मान लिया जाये तो अधिक विषमता हो जाने के कारण अधिक गुण वाला कम गुण वालों को अपने में मिला तो लेगा, किन्तु कमगुण वाला

अधिक गुणवाले पर अपना उतना प्रभाव नहीं डाल सकेगा जितना कि रासायनिक सम्मिश्रण के लिये आवश्यक है। अतः दो अधिक गुण वालों का ही बंध होता है और बन्ध से स्कन्धों की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार का बंध पुद्‌गल द्रव्य में ही संभव है। अतः बंध भी पुद्‌गल की पर्याय है।

बंध के उक्त सैद्धान्तिक विवेचन से प्राप्त निष्कर्ष उल्लेखनीय है।

यथा–

(1) स्निग्धरूक्षत्वाद् बन्धः ॥ 33 ॥

आत्मा में कर्मों का बन्ध भी स्निग्धता – राग और रूक्षता – द्वेष के कारण ही होता है। यदि आत्मा में राग–द्वेष न हो तो कर्म बन्ध नहीं हो सकता। चूंकि मुक्त आत्मा राग–द्वेष से रहित होती है, अतः उसमें कर्म बन्ध का अभाव होने से वह फिर लौटकर संसारी नहीं होती।

(2) नजघन्य गुणानां ॥ 34 ॥

जीव के 10 वें गुण स्थान में जघन्य लोभ कषाय विकार है तो भी मोहकर्म का बंध नहीं होता।

(3) द्वाधिकादिगुणानां तु –

लड़का–लड़की का वैवाहिक सम्बंध होने के लिए लड़के में लड़की की अपेक्षा दो गुण अधिक होना चाहिए। लड़का उम्र और योग्यता (शिक्षा) में लड़की से अधिक होना चाहिए। यदि दोनों उम्र–योग्यता में समान है तो उन दोनों में परस्पर वैवाहिक सम्बंध नहीं होगा।

(4) गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥ 35 ॥

गुरु और शिष्य में मधुर सम्बंध तभी तक रहते हैं जब तक गुरु में शिष्य से अधिक गुण हों। जब शिष्य, गुरु के समान पढ़–लिख जाता है तो फिर वह माधुर्य नहीं रहता।

(5) बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥ 37 ॥

दो अधिक शक्ति अंश वाले पुद्‌गल दो हीन शक्ति अंश वाले पुद्‌गल को अपने रूप परिणमाने वाले होते हैं। यह तो प्रत्यक्ष ही दिखाई देता है कि किस प्रकार गीला गुड़ उस पर पड़ी हुई धूलि को अपने रूप में परिणमा लेता है। अर्थात् बन्ध होने पर अधिक गुणवाला परमाणु अपने से कम गुण वाले परमाणु को अपने रूप कर लेता है।

(6) अधिक गुण वाले वर के जो गोत्र होते है, कम गुण वाली वधू के गोत्र बदलकर, वर के गोत्र हो जाते हैं।

(7) मास्टर की पत्नी को मास्टरनी, डॉक्टर की पत्नी को डॉक्टरनी रूप में मान्यता लौकिक व्यवहार में प्रत्यक्ष देखी जाती है।

(8) यदि सभा में अधिक विद्वान् उपस्थित हों यदि कोई एक–दो मुझ जैसे मूर्ख आ जाये तो भी वह

सभा विद्वानों की ही कहलायेगी।

(9) समान गुण वालों में मित्रता नहीं होती, मित्रता होने के लिए किसी एक में दो गुणों की अधिकता या न्यूनता होना चाहिए। वही मित्रता सफल रहती है।

(10) आचार्य श्री ने धर्म-अधर्म द्रव्यों के कार्यों की चर्चा करते हुए कहा है कि-

''गति स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरूपकारः ॥ 17 ॥''

धर्म और अधर्म द्रव्य भी जीव और पुद्‌गल की तरह दो स्वतंत्र द्रव्य हैं जो जीवन और पुद्‌गलों के क्रमशः चलने और ठहरने में सहायक होते हैं। यद्यपि चलने और ठहरने की शक्ति तो जीव-पुद्‌गल में स्वयं की है किन्तु धर्म और अधर्म द्रव्य उसमें सहायक मात्र हैं क्योंकि बाह्‌य सहायता के बिना उस शक्ति की व्यक्ति नहीं हो सकती।

ये दो द्रव्य ऐसे हैं जिन्हें जैनों के सिवा किसी भी अन्य धर्म ने नहीं माना। अब वैज्ञानिक जन भी Ether, Gravitation - friction के रूप में इनकी सत्ता स्वीकार करने लगे हैं।

प्रो. घासीराम जैन ने अपनी पुस्तक ''कासमोलॉजी ओल्ड एण्ड न्यू'' के पृष्ठ 44 पर धर्म द्रव्य की तुलना आधुनिक विज्ञान के ''ईथर'' नाम तत्व से और अधर्म द्रव्य की तुलना सर आइजक न्यूटन के आकर्षण सिद्धान्त से की है। क्योंकि वैज्ञानिकों ने ''ईथर'' को अमूर्तिक, व्यापक, निष्क्रिय और अदृश्य मानने के साथ गति का आवश्यक माध्यम भी माना है, जैनों ने धर्मद्रव्य को भी ऐसा ही माना है।

अधर्म द्रव्य और विज्ञान के आकर्षण सिद्धान्त की तुलना करते हुये प्रो. जैन ने लिखा है कि ''यह जैन धर्म के अधर्म द्रव्य विषयक सिद्धांत की सबसे बड़ी विजय है कि विश्व की स्थिरता के लिये विज्ञान ने अदृश्य आकर्षण शक्ति की सत्ता को स्वयं सिद्ध प्रमाण के रूप में स्वीकार किया और प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंस्टीन ने उसमें सुधार करके उसे क्रियात्मक रूप दिया। अब आकर्षण सिद्धांत को सहायक कारण के रूप में माना जाता है, मूलकर्ता के रूप में नहीं इसलिये अब वह जैन धर्म विषयक अधर्म द्रव्य की मान्यता के बिल्कुल अनुरूप बैठता है।''

इस प्रकार हम देखते हैं कि जिन निष्कर्षों को हमारे तीर्थंकरों/आचार्यों ने हजारों और लाखों वर्ष पूर्व उद्‌घोषित किया है आज विज्ञान उसी के सहारे आगे बढ़ रहा है।

(11) एक रत्न और है यदि उसकी चर्चा इस आलेख में नहीं की जायेगी तो आलेख अपूर्ण ही माना जायेगा और वह रत्न है -

अर्पितानर्पित सिद्धेः ॥ 32 ॥

मुख्य को अर्पित कहते हैं और गौण को अनर्पित। मुख्यता और गौणता से ही अनेक धर्म वाली वस्तु का कथन सिद्ध होता है। जैनागम में यह सूत्र अनेकान्त-स्याद्वाद का मूल है।

वस्तु में अनेक धर्म-अन्त-स्वभाव होते हैं। कहने वाला उन अनेक धर्मों में से प्रयोजनवश जिस धर्म को मुख्य-प्रधान करके कहे वह अर्पित है और प्रयोजनीय न होने से जिस धर्म को न कहे, गौण कर दे उसे अनर्पित कहते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि कहने वाले ने जो धर्म नहीं कहा वह वस्तु में है ही नहीं, वह भी है तो अवश्य किन्तु कहने वाले ने गौण कर दिया है क्योंकि वचन द्वारा एक समय में वस्तु का एक ही धर्म कहा जा सकता है, सब नहीं। जैसे एक ही मनुष्य अपने पिता की अपेक्षा पुत्र कहा जाता है और अपने पुत्र की अपेक्षा पिता उसी प्रकार वस्तु त्रैकालिक अन्वय रूप परिणाम की अपेक्षा नित्य है और प्रति समय होने वाली पर्याय की अपेक्षा अनित्य है। इससे वस्तु की परिणामी नित्यता सिद्ध होती है। इन दोनों दृष्टियों से समझने पर ही वस्तु रूप समझ में आता है, वाद-विवाद की कोई स्थिति नहीं रहती। वस्तु की यथार्थ सिद्धि इन दोनों दृष्टियों से ही हो सकती है। आचार्य अमृतचन्द्र स्वामी ने इसी बात को-

''एकेनाकर्षन्ती श्लिथयंति वस्तु तत्व मिंतरेण ।
अन्तेन जयति जैनी नीति मंथान नेत्र मिव गोपी।।
-- पुरुषार्थ सिद्धि उपाय

द्वारा स्पष्ट किया है।

विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंस्टीन की थ्योरी ऑफ रिलेटीविटी वास्तव में इसी सूत्र का विकसित एवं आधुनिक रूप है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ''तत्त्वार्थ सूत्र'' का यह पाँचवा अध्याय जैन भौतिक विज्ञान/रसायन विज्ञान का उच्चतम निदर्शन है। इसमें उद्घाटित तथ्यों का जब हम आधुनिक विज्ञान के सिद्धान्तों से मिलान करते हैं तो हम पाते हैं कि उसने जैन वैज्ञानिक सिद्धांतों को या तो उसी रूप में स्वीकार किया है या थोड़े बहुत अंतर से अपने निष्कर्ष स्थापित किये हैं। यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि आज का विज्ञान अभी वहाँ नहीं पहुँचा है और न निकट भविष्य में पहुँच पायेगा, जहाँ तक जैन विज्ञान ने श्रेष्ठता और सूक्ष्मता के साथ वैज्ञानिक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। प.पू. मुनि श्री क्षमासागर जी महाराज के ये शब्द उल्लेखनीय है कि ''जैनधर्म पूर्ण विज्ञान है जबकि आधुनिक विज्ञान अपूर्ण धर्म है। आधुनिक विज्ञान की सीमा जहाँ समाप्त होती है जैन विज्ञान की सीमा वहाँ से प्रारम्भ होती है।''

आज की युवा पीढ़ी धर्म को मात्र रूढ़िवादी व ढकोसला मानती है, लेकिन अगर उन्हें जैन धर्म का यथार्थ रूप सरल भाषा में समझाकर एवं उसके वैज्ञानिक पहलू को ध्यान में रखकर उसके सिद्धांतों की रूपरेखा बतायी जाये तो वे उसे मानने को सहर्ष तैयार हो जावेंगे, क्योंकि जैन धर्म के प्रत्येक नियम व सिद्धांत वैज्ञानिक तथ्यों से भरपूर है और विज्ञान की कसौटी पर खरे उतरते हैं, जिन्हें इस बात की परीक्षा करनी हो उसे तत्त्वार्थ सूत्र का पाँचवा अध्याय अवश्य ही पढ़ना चाहिए।

आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज की जीवन-कथा

भारत-भू पर शान्ति सुधारस की वर्षा करने वाले अनेक महापुरुष और संत कवि जन्म ले चुके हैं। उनकी साधना और कथनी-करनी की एकता ने सारे विश्व को ज्ञानरूपी आलोक से आलोकित किया है। इन स्थितप्रज्ञ पुरुषों ने अपनी जीवनानुभव की वाणी से त्रस्त और विघटित समाज को एक नवीन संबल प्रदान किया है। जिसने राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में क्रान्तिकारी परिवर्तन किए हैं। भगवान राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध, ईसा, हजरत मुहम्मद और आध्यात्मिक साधना के शिखर पुरुष आचार्य कुन्द कुन्द, पूज्यपाद, मुनि योगिन्दु, शंकराचार्य, संत कबीर, दादू, नानक, बनारसीदास, द्यानतराय तथा महात्मा गाँधी जैसे महामना साधकों की अपनी आत्म-साधना के बल पर स्वतन्त्रता और समता के जीवन-मूल्य प्रस्तुत करके सम्पूर्ण मानवता को एक सूत्र में बाँधा है। उनके त्याग और संयम में, सिद्धान्तों और वाणियों से आज भी सुख शांति की सुगन्ध सुवासित हो रही है। जीवन में आस्था और विश्वास, चरित्र और निर्मल ज्ञान तथा अहिंसा एवं निर्बैर की भावना को बल देने वाले इन महापुरुषों, साधकों, संत कवियों के क्रम में **संतकवि दिगम्बर जैनाचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज** वर्तमान में शिखरपुरुष हैं, जिनकी ओज और माधुर्यपूर्ण वाणी में ऋजुता, व्यक्तित्व में समता, जीने में संयम की त्रिवेणी है। जीवन-मूल्यों को प्रतिष्ठित करने वाले बाल ब्रह्मचारी **श्री विद्यासागर जी** स्वभाव से सरल और सब जीवों के प्रति मित्रवत् व्यवहार के संपोषक हैं, इसी कारण उनके व्यक्तित्व में विश्व-बंधुत्व की, मानवता की सौंधी-सुगन्ध विद्यमान है।

आश्विनी शरदपूर्णिमा संवत् २००३ तदनुसार १० अक्टूबर १९४६ को **कर्नाटक प्रांत** के **बेलग्राम** जिले के सुप्रसिद्ध **सदलगा** ग्राम में श्रेष्ठी श्री मल्लप्पा पारसप्पा जी अष्टगे एवं श्रीमती श्रीमतीजी के घर जन्मे इस बालक का नाम **विद्याधर** रखा गया। धार्मिक विचारों से ओतप्रोत, संवेदनशील सद्गृहस्थ मल्लप्पा जी नित्य जिनेन्द्र दर्शन एवं पूजन के पश्चात् ही भोजनादि आवश्यक करते थे। साधु-सत्संगति करने से परिवार में संयम, अनुशासन, रीति-नीति की चर्या का ही परिपालन होता था।

आप माता-पिता की द्वितीय संतान होकर भी अद्वितीय संतान हैं। बड़े भाई श्री महावीर प्रसाद स्वस्थ परंपरा का निर्वहन करते हुए सात्विकता पूर्वक सद्गृहस्थमय जीवन-यापन कर रहे हैं। माता-पिता, दो छोटे भाई अनंतनाथ और शांतिनाथ एवं बहिनें शांता व सुपर्णा भी आपसे प्रेरणा पाकर घर-गृहस्थी के जंजाल से मुक्त होकर जीवन-कल्याण हेतु जैनेश्वरी दीक्षा लेकर आत्म-साधनारत हुए। धन्य है वह परिवार जिसमें सात सदस्य सांसारिक प्रपंचों को छोड़कर मुक्ति-मार्ग पर चल रहे हैं।

इतिहास में ऐसी अनोखी घटना का अन्य उदाहरण बिरले ही देखने को मिलता है।

विद्याधर का बाल्यकाल घर तथा गाँव वालों के मन को जीतने वाली आश्चर्यकारी घटनाओं से युक्त रहा है। खेलकूद के स्थान पर स्वयं या माता-पिता के साथ मंदिर जाना, धर्म-प्रवचन सुनना, शुद्ध सात्विक आहार करना, मुनि आज्ञा से संस्कृत के कठिन सूत्र एवं पदों को कंठस्थ करना आदि अनेक घटनाएँ मानो भविष्य में अध्यात्म-मार्ग पर चलने का संकेत दे रही थीं। आप पढ़ाई हो या गृहकार्य, सभी को अनुशासित और क्रमबद्ध तौर पर पूर्ण करते। बचपन से ही मुनि-चर्या को देखने, उसे स्वयं आचरित कर देखने की भावना से ही बावड़ी में स्नान के समय पानी में तैरने के बहाने आसन और ध्यान लगाना, मंदिर में विराजित मूर्ति के दर्शन के समय उनमें छिपी विराटता को जानने का प्रयास करना, बिच्छू के काटने पर भी असीम दर्द को हँसते हुए पी जाना, परन्तु धार्मिक-चर्या में अंतर नहीं आने देना, उनके संकल्पवान पथ पर आगे बढ़ने के संकेत थे।

गाँव की पाठशाला में **मातृभाषा कन्नड़** में अध्ययन प्रारम्भ कर समीपस्थ ग्राम बेड़कीहाल में हाई स्कूल की नवमी कक्षा तक अध्ययन पूर्ण किया । चाहे गणित के सूत्र हों या भूगोल के नक्शे, पलभर में कड़ी मेहनत और लगन से उसे पूर्ण करते थे। उन्होंने शिक्षा को संस्कार और चारित्र की आधारशिला माना और गुरुकुल व्यवस्थानुसार शिक्षा को ग्रहण किया, तभी तो आज तक गुरुशिष्य-परंपरा के विकास में वे सतत् शिक्षा दे रहे हैं।

वास्तविक शिक्षा तो ब्रह्मचारी अवस्था में तथा पुनः मुनि विद्यासागर के रूप में गुरुवर श्री ज्ञानसागर जी के सानिध्य में पूरी हुई। तभी वे प्राकृत, अपभ्रंश, संस्कृत, कन्नड़, मराठी, अंग्रेजी, हिन्दी तथा बंगला जैसी अनेक भाषाओं के ज्ञाता और व्याकरण, छन्दशास्त्र, न्याय, दर्शन, साहित्य और अध्यात्म के प्रकाण्ड विद्वान आचार्य बने। आचार्य विद्यासागर मात्र दिवस काल में ही चलने वाले नग्नपाद पदयात्री हैं। राग, द्वेष, मोह आदि से दूर इन्द्रियजित्, नदी की तरह प्रवाहमान, पक्षियों की तरह स्वच्छन्द, निर्मल, स्वाधीन और चट्टान की तरह अविचल रहते हैं। कविता की तरह रम्य, उत्प्रेरक, उदात्त, ज्ञेय और सुकोमल व्यक्तित्व के धनी आचार्य विद्यासागर भौतिक कोलाहलों से दूर, जगत मोहिनी से असंपृक्त तपस्वी हैं।

आपके सुदर्शन व्यक्तित्व को संवेदनशीलता, कमलवत् उज्ज्वल एवं विशाल नेत्र, सम्मुन्नत ललाट, सुदीर्घ कर्ण, आजान बाहु, सुडौल नासिका, तप्त स्वर्ण-सा गौरवर्ण, चम्पकीय आभा से युक्त कपोल, माधुर्य और दीप्ति संयुक्त मुख, लम्बी सुन्दर अंगुलियाँ, पाटलवर्ण की हथेलियाँ, सुगठित चरण आदि और अधिक मंडित कर देते हैं। वे ज्ञानी, मनोज्ञ तथा वाग्मी साधु हैं। और हैं प्रज्ञा, प्रतिभा और तपस्या की जीवंत-मूर्ति।

बाल्यकाल में खेलकूद में शतरंज खेलना, शिक्षाप्रद फिल्म देखना, मंदिर के प्रति आस्था रखना, तकली कातना, गिल्ली-डण्डा खेलना, महापुरुषों और शहीद पुरुषों के तैलचित्र बनाना आदि रुचियाँ आप में विद्यमान थीं। नौ वर्ष की उम्र में ही चारित्र **चक्रवर्ती आचार्य प्रवर श्री शांतिसागर जी महाराज** के शेड़वाल ग्राम में दर्शन कर वैराग्य-भावना का उदय आपके हृदय में हो गया था। जो आगे चलकर ब्रह्मचर्यव्रत धारण कर प्रस्फुटित हुआ। २० वर्ष की उम्र, जो कि खाने-पीने, भोगोपभोग या सांसारिक आनंद प्राप्त करने की होती है, तब आप साधु-सत्संगति की भावना को हृदय में धारण कर **आचार्य श्री देशभूषण महाराज** के पास जयपुर (राज.) पहुँचे। वहाँ अब ब्रह्मचारी विद्याधर उपसर्ग और परीषहों को जीतकर ज्ञान, तपस्या और सेवा का पिण्ड/प्रतीक बन कर जन-जन के मन को प्रेरणास्त्रोत बन गया था।

आप संसार की असारता, जीवन के रहस्य और साधना के महत्व को पहचान गए थे। तभी तो हृष्ट-पुष्ट, गोरे-चिट्टे, लजीले, युवा विद्याधर की निष्ठा, दृढ़ता और अडिगता के सामने मोह, माया, श्रृंगार आदि घुटने टेक चुके थे। वैराग्य भावना दृढ़वती हो चली। अतः पदयात्री और करपात्री बनने की भावना से आप गुरुवर **श्री ज्ञानसागर जी महाराज** के पास मदनगंज-किशनगढ़ (अजमेर) राजस्थान पहुँचे। गुरुवर के निकट सम्पर्क में रहकर लगभग 1 वर्ष तक कठोर साधना से परिपक्व होकर **मुनिवर श्री ज्ञानसागर जी महाराज** के द्वारा राजस्थान की ऐतिहासिक नगरी **अजमेर** में **आषाढ़ शुक्ल पंचमी, वि.सं. २०२५, रविवार, ३० जून १९६८ ईस्वी** को लगभग २२ वर्ष की उम्र में संयम का परिपालन हेतु आपने मात्र पिच्छि-कमंडलु धारण कर संसार की समस्त बाह्य वस्तुओं का परित्याग कर दिया। परिग्रह से अपरिग्रह, असार से सार की ओर बढ़ने वाली यह यात्रा ही मानो आपने अंगारों पर चलकर/बढ़कर पूर्ण की। विषयोन्मुख वृत्ति, उद्दण्डता एवं उच्छृंखलता उत्पन्न करने वाली इस युवावस्था में वैराग्य एवं तपस्या का ऐसा अनुपम उदाहरण मिलना कठिन ही है।

ब्रह्मचारी विद्याधर नामधारी, पूज्य मुनि श्री विद्यासागर महाराज। अब धरती ही बिछौना, आकाश ही उड़ौना और दिशाएँ ही वस्त्र बन गये थे। दीक्षा के उपरांत गुरुवर श्री ज्ञानसागर जी महाराज की सेवा-सुश्रुषा करते हुए आपकी साधना उत्तरोत्तर विकसित होती गयी। तब से आज तक आप अपने प्रति वज्र से कठोर, परन्तु दूसरों के लिए नवनीत से भी मृदु बन कर शीत-ताप एवं वर्षा के गहन झंझावातों में भी आप साधना हेतु अरूक-अथक रूप में प्रवर्तमान हैं। श्रम और अनुशासन, विनय और संयम, तप और त्याग की अग्नि में तपी आपकी साधना गुरु-आज्ञा पालन, सबके प्रति समता की दृष्टि एवं समस्त जीव कल्याण की भावना सतत् प्रवाहित होती रहती है।

गुरुवर आचार्य श्री ज्ञानसागर जी की वृद्धावस्था एवं साइटिका से रुग्ण शरीर की सेवा में कड़कड़ाती शीत हो या तमतमाती धूप या हो झुलसाती ग्रीष्म की तपन, मुनि विद्यासागर के हाथ गुरु

सेवा में अहर्निश तत्पर रहते। आपकी गुरु सेवा अद्वितीय रही, जो देश, समाज और मानव को दिशा बोध देने वाली थी। तभी तो डॉ. पन्नालाल साहित्याचार्य ने लिखा था कि १० लाख रुपये की संपत्ति पाने वाला पुत्र भी जितनी माँ-बाप की सेवा नहीं कर सकता, उतनी तत्परता एवं तन्मयता पूर्वक आपने अपने गुरुवर की सेवा की थी।

किन्तु सल्लेखना के पहले गुरुवर्य ज्ञानसागरजी महाराज ने आचार्य-पद का त्याग आवश्यक जानकर आपने आचार्य पद-मुनि विद्यासागर को देने की इच्छा जाहिर की, परन्तु आप इस गुरुवर भार को धारण करने किसी भी हालत में तैयार नहीं हुए, तब आचार्य ज्ञानसागर जी ने संबोधित कर कहा कि साधक को अंत समय में सभी पद का परित्याग आवश्यक माना गया है। इस समय शरीर की ऐसी अवस्था नहीं है कि मैं अन्यत्र जाकर सल्लेखना धारण कर सकूँ। तुम्हें आज गुरु-दक्षिणा अर्पण करनी होगी और उसी के प्रतिफल स्वरूप यह पद धारण करना होगा। गुरु दक्षिणा की बात से मुनि विद्यासागर निरुत्तर होगये। तब धन्य हुई **नसीराबाद (अजमेर) राजस्थान** की वह घड़ी जब **मगसिर कृष्ण द्वितीया, संवत् २०२९, बुधवार, २२ नवम्बर, १९७२ ईस्वी** को **आचार्य श्री ज्ञानसागर जी** ने अपने ही कर-कमलों से आचार्य-पद पर **मुनि श्री विद्यासागर महाराज** को संस्कारित कर विराजमान किया। इतना ही नहीं मान-मर्दन के उन क्षणों को देखकर सहस्त्रों नेत्रों से आँसुओं की धार बह चली जब आचार्य श्री ज्ञानसागर जी ने मुनिश्री विद्यासागर महाराज को आचार्य पद पर विराजमान किया एवं स्वयं आचार्य पद के नीचे उतरकर सामान्य मुनि के समान नीचे बैठकर, नूतन आचार्य श्री विद्यासागर महाराज के चरणों में नमन कर बोले - ''हे आचार्य वर ! नमोस्तु, यह शरीर रत्नत्रय साधना में शिथिल होता जा रहा है, इन्द्रियाँ अपना सम्यक् कार्य नहीं कर पा रही हैं। अतः मैं आपके श्री चरणों में विधिवत् सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण धारण करना चाहता हूँ, कृपया मुझे अनुगृहीत करें।'' आचार्य श्री विद्यासागर ने अपने गुरुवर की अपूर्व सेवा की। पूर्ण निर्ममत्व भावपूर्वक आचार्य ज्ञानसागर महाराज मरुभूमि में वि.सं. २०३० वर्ष की ज्येष्ठ मास की अमावस्या को प्रचण्ड ग्रीष्म की तपन के बीच में ४ दिनों के निर्जल उपवास पूर्वक नसीराबाद (राज.) में ही शुक्रवार १ जून १९७३ ईस्वी को १० बजकर १० मिनट पर इस नश्वर देह का त्याग कर समाधिमरण को प्राप्त हुए।

आचार्य विद्यासागर जी द्वारा रचित रचना-संसार में सर्वाधिक चर्चित और महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में **'मूक माटी' महाकाव्य** ने हिन्दी-साहित्य और हिन्दी सत्-साहित्य जगत् में आचार्य श्री को काव्य की आत्मा तक पहुँचाया है।

संकलन- श्रीमती सुशीला पाटनी, किशनगढ़

सम्यक् ध्यान शतक

– मुनि आर्जवसागर

गतांक से आगे ....

ध्यान साधना हेतु चिन्तवन

मन यह वानर–सम कहा, बड़ी चपलता मान।
ज्ञान, ध्यान में लीन जब, आत्मशांति सुख जान।।

❖

मनस्–भूत को धर्म में, सदा लगाना ज्ञान।
पाप बंध से दूर हों, पाते समता ध्यान।।

❖

अक्ष–खिड़कियों से सदा, विषय–पवन का जोर।
अगर बंद हों खिड़कियाँ, निज सुख की हो भोर।।

❖

पैर व मुख अन्दर करे, कछुआ पीठ दिखाय।
बाधक से ध्यानी बचे, संयम सुख महकाय।।

❖

वायु बहती वेग से, जल में उठें तरंग।
विषयों की वायु रुके, निर्मल आत्म विरंग।।

❖

रवि किरणें बिखरी तपें, कागज जला न देत।
काँच साथ दुर्बीन का, भस्मसात् कर देत।।

❖

मन पूरे जग में फिरे, एक जगह ना ध्यान।
केन्द्रित निज में ध्यान तब, प्रगटे केवलज्ञान।।

ध्यान की अवस्थाएँ

समता, ध्यान समाधि वा, गुप्ति शुद्ध उपयोग।
निजानुभव निश्चय कहो, यथाख्यात सतयोग।।

ध्यान के योग्य सामग्री

द्रव्य, क्षेत्र, सु–काल सह, भाव जीव जब पाय।
समता ध्यानादिक मिलें, सुयोग्य वह बन जाय।।

क्रमशः ....

आर्थिक विकास, उदारीकरण एवं वैश्वीकरण का अहिंसात्मक श्रेष्ठ जीवन शैली पर प्रभाव

डॉ. अजित कुमार जैन

गतांक से आगे ....

मानव जीवन को दीर्घ आयु के अनुकूल चलाने के लिए प्राणी को अनुकूल एवं उत्तम आहार की आवश्यकता है। आहार की पूर्ति के लिए समयानुसार भोजन प्राप्त करने के अनेक साधन तथा तरीके अपनाए गए हैं। इसके लिये अनुसंधान कर नये-नये साधन तथा तरीके खोजे जाते रहे हैं एवं रहते हैं। विभिन्न साधनों और विधियों में विसंगति होने के कारण प्रज्ञावान मानव अपनी इंद्रियों की लोलुपतावश अर्थात स्वाद के लोभ में, अच्छी सुगंध, अच्छे दिखने के कारण महँगे और अभक्ष्य भोजन सामग्री ग्रहण करने की स्पर्धा में अनेक प्रकार के पापों को या दुःखों को करता व बीमारियों को बढ़ाता रहता है। विभिन्न प्रकार के **बढ़ते खर्च** व बीमारियों की समस्या के समाधान हेतु यहाँ उत्तम स्वास्थ्य के लिये अभक्ष्य (नहीं खाने योग्य) पदार्थों का निषेध करके तथा भक्ष्य (खाने योग्य) पदार्थों का सेवन करने के उपाय अपनाये जाने की जानकारी दी जाने की आवश्यकता है। अतः शुद्ध भोजन लेना ही स्वस्थ्य शरीर से दुखों व बीमारियों को कम करने की आधार शिला है। भोजन को मुख्यतः तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है :-

1. **सात्विक** – भक्ष्य (खाने योग्य), सादा, सुपाच्य, अहिंसात्मक एवं स्वच्छ विधि से तैयार भोजन सात्विक होता है, जो मानव के मन को सुख-शान्ति, सन्तुष्टि एवं ज्ञान की वृद्धि देता है। इस भोजन से स्वस्थ्य शरीर मिलता है। जिससे आत्मा को पापों से रहित होने में, शरीर के समग्र विकास में सहायक, विचारों की निर्मलता, प्रकृति के अनुकूल, इहलोक और परलोक के लिये अनुकूलता होती है।

2. **तामसिक** – तामसिक भोजन प्राणी की पीड़ा सहित, विवेक से रहित होकर निर्दयतापूर्वक तैयार किया जाता है। माँस, मधु (शहद), शराब (मद्य), कन्दमूल व फल, छोटे एवं बड़े प्राणियों के घात होने पर तैयार किया गया भोजन आत्मा तथा मन की शान्ति के पतन का कारण होता है। यह भोजन शरीर को रोगी बनाते हुए मन में विनाश तथा हिंसक वातावरण को जन्म देता है। इस भोजन के सेवन से द्रव्य, क्षेत्र काल एवं भाव चारों अशुद्ध हो जाते हैं।

3. **राजसिक** – राजसिक भोजन होटलों में अत्यधिक तेल, मिर्च, मसाले के साथ अस्वच्छ, अभक्ष्य (नहीं खाने योग्य) खाद्य पदार्थों से, अशुद्ध, प्रतिकूल तथा घिनौने वातावरण में तैयार, विलासता पूर्ण बर्तनों में परोसा जाता है। रात्रि में निर्दयता एवं असावधानी पूर्वक बनाया जाता है। अस्वच्छ प्रक्रियाओं से तैयार भोजन ग्रहण करने पर शरीर रोगी हो जाता है। मन में अशान्ति, पाँचों

इंद्रियों की लोलुपता को बढ़ाने की मानसिकता तथा पापों की वृद्धि करने में सहायक होता है। इस भोजन के सेवन से द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव चारों अशुद्ध हो जाते हैं।

दैनिक डेली स्वीट्स के कुछ उत्पादों को शुद्ध या भक्ष्य (खाने योग्य) व अच्छी क्वालिटी का घर में बनाने की सामान्य विधि सुझाई गई है जिसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जाकर उपयोग में लाया जा सकता है :-

बिस्किट एवं नान-खटाई व कुकी :- आवश्यक सामग्री : बारीक आटा (मैंदा जैसा बारीक) एक कटोरी, १/४ कटोरी घी, १/२ कटोरी पिसी शक्कर या बूरा, १/२ से १ चम्मच खाने का सोड़ा, १/२ चम्मच बेकिंग पावडर।

विधि : पहले घी तथा बूरा तब तक फेंटे जब तक मिक्सचर हल्का तथा इसका रंग परिवर्तन हो जावे। आटे में पहले सोडा (एवं बेकिंग पावडर) मिलावें तथा इसे थोड़ा-थोड़ा फेंटे हुए घी एवं बूरे में मिलावें।

(अ) यदि बिस्किट बनाना हो तो गोलियाँ बनावें। यदि बनाने में कठिनाई होतो एक (छोटी) चम्मच दूध मिलावें। १५० डिग्री सेन्टीग्रेड पर १० मिनट तक बेक करें। गुलाबी होने पर बिस्किट का उपयोग करें।

(ब) यदि नान-खटाई बनाना हो तो एक चुटकी अमोनिया पावडर मिलावे और उपरोक्तानुसार बेकिंग करें।

(स) यदि कुकी बनाना हो तो नारियल, मूँगफली या काजू आदि का चूरा या टुकड़े मिलाकर उपरोक्तानुसार बेक करें।

केक : आवश्यक सामग्री : एक कटोरी दूध, एक कटोरी मलाई, दो कटोरी बारीक आटा (मैदा जैसा), एक चम्मच बेकिंग पाउडर, १/२ चम्मच खाने का सोड़ा, २ छोटी चम्मच घी, एक कटोरी बूरा या बारीक शक्कर।

विधि : कुनकुना दूध और घी को मिलाएँ। इस मिश्रण को तब तक फेंटें जब तक मिक्सचर हल्का तथा इसका रंग परिवर्तन हो जावे। सभी सामग्री को अच्छे से मिला दें, सूखे मेवे आवश्यकतानुसार मिलाकर, तथा फिर से बेक करें। बेक करने के बर्तन में मिली हुई सामग्री डालने से पहले घी अथवा तेल को बर्तन की सतह पर लगाने से केक चिपकेगा नहीं।

टॉफी : विधि : मलाई तथा शक्कर एवं बूरा को तब तक गर्म करें जब तक घी अलग नहीं हो जावे। सूखे मेवे आवश्यकतानुसार मिलाकर, प्राप्त सामग्री को टाफी जैसा आकार देवें।

आइस्क्रीम : आवश्यक सामग्री : १/२ लीटर दूध, डेढ़ चम्मच मक्के का आटा (कार्न फ्लोर), १/२ चम्मच सी. एम.सी. पावडर, १/२ चम्मच जी.एम.एस. पावडर, शक्कर एक कटोरी, १/४ कटोरी क्रीम या मलाई।

विधि : उबलते दूध में मक्के का आटा (कार्न फ्लोर), सी.एम.सी. (कार्बाक्सी मिथायल सेलूलोज), जी.एम.एस. (ग्लूटरल्डिहाइड मिथायल सेलूलोज) पावडर व शक्कर डालें। ठण्डा करें। क्रीम एवं मलाई मिलाकर मिक्सर में मैश करें। एक घंटा तक मेक्सीमम पर फ्रीजर में रखें। पुनः मिक्सर में मैश करें एवं १/२ घंटा तक मिनिमम पर फ्रीजर में रखें। सूखे मेवे आवश्यकता के अनुसार मिलाकर वितरित करें।

अन्य उत्पादों को भी घर में अच्छी क्वालिटी का बनाने हेतु अन्यत्र उपलब्ध विधि को विवेकानुसार उपयोग में लाया जा सकता है।

क्रमशः...............

The Tao of Jaina Sciences का नया संस्करण उपलब्ध

The Tao of Jaina Sciences -2009 का नया संस्करण (रू. 500/-मूल्य) तथा अंग्रेजी हिंदी में प्रकाशित पद्मपुराण (400/-मूल्य), जो बंधुवर खरीदना चाहते हों उन्हें लब्धिसार प्रथम खंड, भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, दिल्ली, प्रोजेक्ट से रचित गणितीय टीका निःशुल्क प्रदान साथ में की जावेगी। पोस्टेज अलग से देय होगा। यह निःशुल्क ग्रंथ अनुमानित रूप से 2000/- रूपये कीमत वाला है तथा इसका नाम "Systemic Sciences in the Karma Antiquity", Vol-I है। आचार्य श्री 108 विभवसागर जी के आशीर्वाद से यह ग्रंथ निःशुल्क वितरित किया जा रहा है। यदि केवल यही ग्रंथ निःशुल्क चाहिये हो तो पोस्टेज खर्च अथवा अलग से प्रायः 50 रूपये देय होगा। इसका भाग 2 (Vol-II) में क्षपणासार तथा भाग 3 (Vol-III) में परिशिष्टादि हैं जो प्रायः 6 माह में छपकर तैयार होने की आशा है। जो सज्जन, विद्वान इस ग्रंथ को सीधे जबलपुर आकर लेना चाहते हों वे सीधे, प्रोफेसर एल.सी. जैन (email : lcjain25@rediffmail.com) से प्राप्त कर सकते हैं।

प्रो. एल.सी. जैन द्वारा विगत वर्षों में किए गए जैन कर्म सिद्धान्त के गणितीय कार्यों की विस्तृत जानकारी हेतु बेबसाइट www.mathematical-karma-arena.com पर लॉगआन करें। इन्टरनेट पर उक्त विषय के अन्य ब्लाग्स भी अवलोकनार्थ उपलब्ध हैः-

1. www.karmafieldtheory.blogspot.com 2. www.karmaunifiedfieldtheory.blogspot.com
3. www.lamichandrajain.blogspot.com

सम्पर्क : **प्रोफेसर लक्ष्मी चद्र जैन,** दीक्षा ज्वेलर्स के ऊपर, 554, सराफा, पुरानी बजाजी, जबलपुर-482002 (म.प्र.)

आधुनिक अहिंसक कैसे बनें ?

अनजानी हिंसा से बचें। अहिंसक वस्तुओं को ही अपनाएँ। अन्तर्राष्ट्रीय संस्था बी.डब्ल्यू.सी. के द्वारा जारी प्रमाणित सूची में लाये गये निम्न उत्पादों का ही प्रयोग करें क्योंकि अनेक उत्पादों में जानवरों की हड्डी, चर्बी, विटामिन, अण्डा, शहद आदि का मिश्रण हो सकता है।

1. टूथपेस्ट – अमर, ऐंकर, पारले प्रूडेंट, कैल्शियम, वीको वज्रदंती, स्माई-2 जेल।
2. टूथ पाउडर – प्रोमिस, वीको वज्रदंती, ऐंकर।
3. साबुन – सिंथॉल इंटरनेशनल लाइम, ग्राउनिंग ग्लोरी, मेसूर कारबोलिक, जेसमिन, लवेंडर, रोज, संदल, संदल क्लासिक, खस, रातरानी, लाइफ फ्रेश गोदरेज, शिकाकाई, प्रमियम, निरमा बॉथ लाइम, लाइम फ्रेश, प्रोमिस, सिकाकाई, नीम केयर ब्यूटी।
4. शेविंग क्रीम एंड राउण्ड – गोदरेज शेविंग राउण्ड, गोदरेज लाइम फ्रेश, मिंथाल मिस्ट ।
5. हेयर क्लीनर शेम्पू – अयूर नेचुरल, हेयर वॉश, निरमा ब्यूटी सोप, ऐपिल शेम्पू, शिकाकाई शेम्पू, शिल्क केश शेम्पू, शहनाज, शामला शेम्पू, हिमालय हर्वल शेम्पू
6. स्किन केयर क्रीम – वीको टरमेरिक, शहनाज हुसैन, मेरीगोल्ड टनर, डॉ. जेन्स स्किन
7. टेलकम पाउडर – सिंथॉल क्लासिक, आइसकूल, सिंथॉल लक्जरी एण्ड सेटिन ।
8. लिपिस्टिक – शहनाज हुसैन शेलिप्स।
9. हेयर केयर ऑयल – शालीमार कोकोनट आइल, रीता हेयर ऑयल, हिमालयन हर्ब टॉनिक, शनशील हर्बल हेयर, हर्वा हेयर ऑयल।
10. आफ्टर शेव – शहनाज हुसैन मेन फावर।
11. बिन्दी – दिवानी बिन्दी।
12. बेल्ट और जूते – वेगा, अल्फा।
13. परफ्यूम – शहनाज हुसैन फ्लोरल परफ्यूम।
14. बिस्किट – क्रेकजेक, पारले-जी, पारले मेजिक्स, मेरी, मेरी शक्ति, पारले हाइड एंड सीक, मोनक्को, पारले-जी लिंगस, ओवन पिक बिस्किट बटर कुकिस, खरी।
15. ब्रेड – सुप्रीम, स्पाइसर रागी, व्हीटजर्म, ओवन पिक।
16. बटर चीज – अमूल, अमूल चीज।
17. चॉकलेट – अमूल चॉकलेट, पारले केफिनो, किस्मी, मेलोडी, मेंगो बाइट
18. आईसक्रीम मिल्क पाउडर– अमूल ।
19. सॉस – प्रवीन सिंग चिऊंग, बोरास सॉस।
20. स्वीट – हल्दीराम केशर अंगूरी पेठा क्यूब, सोनपपड़ी, चम-चम, गुलाब बहार, केसर रसबेरी, राजभोग।

21. वनस्पति डालडा – रसादा, लाइन ब्राण्ड, रंजीत
22. अगरबत्ती – कर्मयोगी, मेल्टिंग, अरोमा
23. डिटरजेंट – फिरल लिक्विड ट्रीक
24. ग्लूस्टिक – पेवीकोल, पेवीस्टिक
25. माचिस – होम लाइट्स
26. क्लीनर – प्रेशी डिश वॉशर, गुड मार्निंग, क्लास क्लीनर
27. प्लाईवुड – इक्को बोर्ड
28. शू पॉलिस ब्रश – स्मार्ट शाइन

साभार–बी.डब्ल्यू.सी. वेजीटेरियन शॉर्प्स गाइड २००४ *संकलन : सुनील वेजीटेरियन, दमोह्*

जीवन है गीली मिट्टी

डॉ. रमेश कुमार जैन, ग्वालियर

आप तो गुरुवर ज्ञानी हैं, इस मन्द बुद्धि का ध्यान करो।
चरणों में समर्पित करता हूँ इस मिट्टी पर उपकार करो।।
मैं तो गीली मिट्टी हूँ, मिट्टी को समर्पित करता हूँ ।
आर्जवसागर गुरुवर को यह जीवन अर्पित करता हूँ ।।

इस भूले भटके मानव को, नया रास्ता बतलाना ।
मैं आत्म कल्याण करूँ, इक नया रास्ता बतलाना ।।
मैं तो गीली मिट्टी हूँ, मिट्टी को समर्पित करता हूँ ।
आर्जवसागर गुरुवर को यह जीवन अर्पित करता हूँ ।।

जिनवाणी की छाँव बिठाकर इसे रास्ता बतलाना ।
सौंप दिया है तन, मन, धन, इसे रास्ता बतलाना ।।
मैं तो गीली मिट्टी हूँ, मिट्टी को समर्पित करता हूँ ।
आर्जवसागर गुरुवर को यह जीवन अर्पित करता हूँ ।।

अष्ट मूलगुण गुरु देकर अज्ञानी पर उपकार किया।
आप दया के सागर गुरुवर मोक्ष मार्ग प्रशस्त किया ।।
मैं तो गीली मिट्टी हूँ, मिट्टी को समर्पित करता हूँ ।
आर्जवसागर गुरुवर को यह जीवन अर्पित करता हूँ ।।

पुस्तक समीक्षा : जैन धर्म में कर्म व्यवस्था - मुनि श्री आर्जवसागर

कर्म का मर्म

पं. लालचन्द्र जैन ''राकेश''

कर्मवाद जैन दर्शन का एक मौलिक, मुख्य एवं आधार भूत सिद्धान्त है जो जैनागम के हजारों पृष्ठों में वर्णित है। डॉ. जैकोबी के शब्दों में "The Theory of Karma is the Keystone of Jain System" अर्थात् कर्म सिद्धान्त जैन धर्म के बुनियादी पाषाण सदृश है। दूसरे शब्दों में कर्म सिद्धान्त जैन दर्शन का प्राणभूत सिद्धान्त है, इसके बिना जैन शास्त्र की विवेचना अधूरी रह जाती है।

जगत विविधताओं का केन्द्र है तथा जीवन विषमताओं से घिरा हुआ है, इसलिए लोक में विचित्रता के दर्शन होते हैं। इस विचित्रता से कर्म का अस्तित्व सिद्ध होता है। सभी भारतीय दर्शनों ने कर्म सिद्धान्त पर अपने-अपने ढंग से विशेष विचार व्यक्त किये हैं, किन्तु जैन दर्शन में इस पर जो तात्त्विक, विशद, गम्भीर, तर्कपूर्ण एवं वैज्ञानिक विवेचना प्रस्तुत की गई है वह अन्य दर्शनों में नहीं पायी जाती।

जैन दर्शन के कर्म सिद्धान्त की मीमांसा करने पर उसकी मौलिकता एवं विशिष्टता के अनेक पक्ष उजागर होते हैं। उसके अनुसार भावकर्म से प्रभावित होकर कुछ सूक्ष्म जड़ पुद्‌गल स्कंध जीव के आत्म प्रदशों में प्रवेश पाते हैं जिन्हें द्रव्य कर्म कहते हैं, यही द्रव्य कर्म परिपक्व अवस्था को प्राप्त हो फल देते हैं - यह जैन धर्म की मौलिकता है। जैन दर्शन कहता है कि जीव स्वयं अपने कर्म का कर्ता और भोक्ता है। कर्म तो हम करें और फल ईश्वर या अन्य शक्ति दे यह बात तर्क की कसौटी पर खरी नहीं उतरती।

जैन कर्म सिद्धान्त के आलोढ़न से यह तथ्य सामने आता है कि भाग्य और कुछ नहीं वह अपने ही कर्मों का फल है। अतः व्यक्ति अपने भाग्य का विधाता स्वयं है। इस सिद्धान्त से पुरुषार्थ करने की प्रेरणा मिलती है। जैन कर्म सिद्धान्त जहाँ हमें कर्मों की शक्ति से परिचित कराता है वहीं उनके नष्ट करने का उपाय भी बताता है। वह जीव की स्वतंत्र सत्ता की (नित्यावस्थितान्यरूपाणि) घोषणा के साथ ही उसकी अमरता (उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत, सत द्रव्य लक्षणम्) का रहस्य भी उद्‌घाटित करता है। उसकी स्पष्ट घोषणा है कि ''जीव जुदा, पुद्‌गल जुदा, यही तत्त्व का सार।'' यद्यपि यह जीव अनादिकाल से कर्म के बंधन में जकड़ा हुआ है किन्तु यदि वह अनुकूल पुरुषार्थ करे तो इस बंधन को छिन्न-भिन्न कर पूर्ण स्वतंत्र (अविनाशी अविकार परमरसधाम हो, समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो। शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो, जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो।।) हो सकता है। जीव कभी जड़ नहीं हो सकता और जड़ कभी जीव नहीं हो सकता। जैन कर्म सिद्धान्त हमारी आत्मशक्ति को जाग्रत कर, निराशा एवं अवसाद को हटा पुरुषार्थ करने की प्रेरणा देता है।

जीव के इस जन्म के कर्म उसके देह त्याग के साथ नष्ट नहीं हो जाते अपितु वे अगले जन्म में भी साथ जाते हैं। अर्थात् व्यक्ति वर्तमान को सम्हालकर भविष्य को उज्ज्वल बना सकता है। इस प्रकार जैन

कर्म-सिद्धान्त हमें अनेक हितकारी सन्देश देता है।

जैनागम का कर्म सिद्धान्त एक अथाह सागर से कम नहीं है, उसका पार पा सकना अत्यन्त कठिन है किन्तु हमारे अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी सन्तों ने उसका पुनः-पुनः मंथन कर जो सार नवनीत प्राप्त किया है उसे अपने प्रवचनों के माध्यम से अभिव्यक्ति देकर सर्व साधारण के लिए ग्राह्य बना दिया है। ऐसे ही एक संत हैं परम पूज्य १०८ मुनि श्री आर्जवसागरजी महाराज। आपश्री ऐसे महान साधु हैं जो सदा ग्रन्थों का स्वाद लिया करते हैं, ऐसे निर्ग्रन्थ हैं जो सदा ग्रन्थों में रमा करते हैं और ऐसे संत है जो संसार का अंत करने के लिए सदा साधना किया करते हैं।

संसार को अंत करने का सर्वोत्तम उपाय है स्वाध्याय/स्वाध्याय शास्त्रों का भी हो सकता है और स्वात्मा का भी। जब स्वात्मा का स्वाध्याय होता है, तो होता है आत्म कल्याण और जब शास्त्रों का स्वाध्याय होता है तो होता है स्व-पर कल्याण। जैसे एक महानदी से अनेक छोटी-छोटी नदियाँ निकलती है वैसे ही एक महान् शास्त्र के स्वाध्याय से अनेक छोटे-छोटे शास्त्र प्रकट होते हैं। प्रस्तुत लघु पुस्तिका **''जैन धर्म में कर्म व्यवस्था''** बड़े-बड़े ग्रन्थों के सतत स्वाध्याय से प्राप्त अमृतफल का निचोड़ है।

विषय तो सागर-सा विस्तृत, गहन और गंभीर है, किन्तु प.पू. मुनि श्री आर्जवसागरजी महाराज ने विषय वस्तु को आत्मसात कर 'गागर में सागर' भरने की उक्ति को चरितार्थ करते हुए अत्यंत सरल शैली और भाषा में उसे सफलता पूर्वक प्रस्तुत किया है। आज का जिज्ञासु श्रोता विषय वस्तु को सुवाच्य और सुपाच्य शब्दावली में सुनना चाहता है। मुनिश्री की यह प्रवचन पुस्तिका उसकी पिपासा को शांत करने के लिए स्वाति-जल की तरह परमोपयोगी है।

पूज्य श्री का यह प्रवचन पूर्ण व्यवस्थित (to the point), संक्षिप्त किन्तु स्वयं में पूर्ण, आधुनात्मक, लौकिक, सुपरिचित उदाहरणों से सुस्पष्ट, प्रश्नोत्तर शैली में सुग्राह्य, निमित्त एवं उपादान को संतुलित महत्व देने वाला, संचयित सामग्री के आगमिक ग्रन्थों का यथास्थान उल्लेख होने से पूर्ण प्रामाणिक है, विषय वस्तु को किसी अन्य ग्रन्थ में अन्वेषण की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक कर्म का परिचयात्मक वर्णन एवं उसके बंध के कारणों का भी उल्लेख होने से कृति की उपयोगिता और भी बढ़ गई है। अष्ट कर्मों का नाश सद्भावना और ध्यान से संभव है, बताकर कृति पूर्ण होती है।

आज के व्यस्ततम समयाभावी युग में प्रत्येक व्यक्ति कम समय, कम श्रम एवं कम शब्दों में विषय को पढ़ना और समझना चाहता है इस दृष्टि से भी यह चौबीस पृष्ठीय लघुकृति अत्यंत उपयुक्त है। महत्वपूर्ण विषय पर सर्वोपयोगी, संक्षिप्त, सरलभाषा में ''बिन्दु में सिन्धु'' समाने वाली इस कृति के माध्यम से प.पू. मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज ने हम सबका जो उपकार किया है उसके प्रति हम उन्हें कोटिशः नमोऽस्तु अर्पित करते हुए अन्य अनेक कृतियाँ प्रदान हेतु सविनय निवेदन करते हैं।

पूज्यश्री की ज्ञान-ध्यान-तप की साधना सदा वृद्धिंगत होती रहे यही मंगलभावना है।

आचार्य श्री विद्यासागर पदारोहण दिवस : कुचामन सिटी

कुचामन सिटी के दि. जैन वर्धमान जिन चैत्यालय, डीडवाना रोड, में 22.11.09 को संत शिरोमणि परम पूज्य आचार्य गुरूवर श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के आचार्य पदारोहण दिवस के अवसर पर परम प्रभावक परम पूज्य मुनिश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज के सानिध्य में पंडित डॉ. विमल कुमार जी, जयपुर के निर्देशन में तथा लालचंद जी, कमल जी, सुभाष जी एवं जितेन्द्र जी पहाड़िया के सौजन्य से शांति विधान पूजन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् मुनिश्री के मंगल प्रवचन हुए। दोपहर में अत्यंत उल्लास के साथ आचार्य पदारोहण दिवस को मनाने हेतु विराट जुलूस के साथ मुनिश्री श्री जिनेश्वर दास स्कूल परिसर पहुँचे।

23.11.09 को श्री विनोद जी लावटिया के सौजन्य से णमोकार मंत्र विधान सम्पन्न हुआ। 24.11.09 को श्रीमती ऊंचीदेवी ध.प. स्व. श्री सूरजमल की स्मृति में उनके सुयोग्य सुपुत्रों श्री भागचंद जी, अशोक जी, धनराज जी, सुरेन्द्र जी एवं अनिल जी द्वारा शांति विधान का आयोजन श्री दिगम्बर जैन वर्धमान जिन चैत्यालय के निर्माणाधीन मंदिर के परिसर में मुनिश्री के सानिध्य में सम्पन्न हुआ। निर्माणाधीन मंदिर हेतु रत्नों की 21 इंच ऊंचाई की पदमासन चौबीसी का निर्माण किया जा रहा है।

महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल

संयमी महिला सम्मान समारोह : महिला समिति, अजमेर

श्री दिगम्बर जैन महासमिति महिला संभाग, अजमेर द्वारा आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज की जन्म जयंती कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा दिनांक 04.10.09 को अजमेर में आचार्य महाराज श्री की दीक्षा स्थल पर श्री आर्जवसागर जी महाराज के सानिध्य में संयमी महिलाओं (अणुव्रत-प्रतिमा धारण, 1234 उपवास, समवशरण व्रत उपवास एवं मंदिर निर्माण करने वाला परिवार) का विशेष सम्मान समारोह आयोजित किया गया । इसमें अजमेर नगर की लगभग 25 महिलायें सम्मानित की गयी।

कार्यक्रम का मंगलाचरण सरावगी मौहल्ला की महिलाओं ने किया - मुख्य अतिथि-श्रीमती सुधा सोनी रहीं- दीप प्रज्जवलन-संजलि जैन (हाथीभाटा मंदिर की निर्माणकर्ता) ने किया। चित्र अनावरण श्रीमती सुशीला जैन- (आचार्य श्री ज्ञानसागर जी व विद्यासागर जी के चित्र के समक्ष) केसरगंज ने किया। परमपूज्य 108 मुनिश्री आर्जवसागर जी महाराज ने इन महिलाओं को संबोधन संयम की महिला बतलाते हुए आर्शीवचन कहे। कार्यक्रम का संचालन अध्यक्ष श्रीमती निर्मला पांडिया द्वारा किया गया।

श्रीमती निर्मला पांडिया, अजमेर

आचार्य प्रवर श्री १०८ विभवसागरजी की जबलपुर में अभूतपूर्व धर्म प्रभावना

सन् 2009 के चातुर्मास में जबलपुर के जूड़ी तलैया स्थित भगवान श्री 1008 त्रिमूर्ति पार्श्वनाथ जिनालय में गणाचार्य श्री 108 संत शिरोमणि पूज्य विराग सागर के सारस्वत कवि शिष्य आचार्य श्री 108 विभवसागरजी ने जबलपुर जैन समाज को अप्रतिम बोध निधि रूप प्रवचनों का लाभ दिया जो दशलक्षण देशना के नाम से प्रकाशित हुआ है। आचार्य श्री द्वारा इसके अतिरिक्त प्रायः 40 ग्रंथों का प्रकाशन विभिन्न विषयों पर हुआ है जिनमें अनेक काव्य गीतिका रूप हैं तथा अनन्य भक्ति भाव से ओत-प्रोत हैं, विधान, स्तोत्र आदि रूप में है। अखिल भारत के प्रायः 65 आचार्यों में वे सबसे अल्पवय के हैं, जिनकी प्रतिभा, स्मरण शक्ति, आत्म समर्पण, दार्शनिक क्षमता एवं वात्सल्य भावना अद्वितीय है।

दिनांक 22.11.2009 को पिच्छी परिवर्तन के समय जैन समाज ने भारत के प्रसिद्ध विद्वानों का अलंकरण अभिनन्दन अत्यंत विभूति सम्पन्नता के साथ किया, जिनमें प्रोफेसर लक्ष्मीचंद्र जैन, श्री नीरज जैन, डॉ. भागचन्द्र भागेन्दु, श्री इंजि. सुरेश सरल एवं डॉ. एल.सी. जैन (भौतिकी) प्रमुख थे।

आचार्य श्री की प्रेरणा से रायबहादुर स्व. श्री नन्दनलाल जैन की सुपुत्री कुमारी मीना जैन द्वारा प्रोफेसर लक्ष्मीचंद्र के ग्रंथ (भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी द्वारा प्राप्त ग्रांट से रचित) लब्धिसार के प्रकाशन हेतु सवा लाख रूपये का अनुदान घोषित किया गया। यह प्रकाशित होने पर विभिन्न इच्छुक संस्थाओं तथा विद्वानों को निःशुल्क प्रदान किया जावेगा। जबलपुर से गमन पूर्व आचार्यश्री द्वारा प्रोफेसर साहिब के सभी अप्रकाशित ग्रंथों को प्रकाशित करवाने की अतिशय पूर्ण घोषणा भी की गयी।

श्रेयांस कुमार जैन, जबलपुर

भाव विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता
(नियमावली)

प्रश्नोत्तर में प्रश्नों के चार प्रकार या विषय होंगे :-

1. चारों अनुयोगों पर आधारित होंगे।
2. तीर्थ स्थानों से संबंधित होंगे।
3. मुनि संघ से संबंधित होंगे।
4. जैन संस्कृति से संबंधित होंगे।
5. अहिंसा / शाकाहार / व्यसन मुक्ति से संबंधित भी होंगे।

प्रश्न प्रणाली :-

1. एक प्रश्न के दिये गये उत्तरों में से एक सही उत्तर पर [✔] का निशान लगाना है ।
2. प्रश्न का उत्तर (हाँ या ना) में देना है।
3. खाली स्थान भरना है।
4. एक प्रश्न का विस्तृत उत्तर कम से कम दो लाइनों में वाक्य सहित देना है।
5. जोड़ी बनाना है। (कोष्ठक में नम्बर डालकर या लाइनों से मिलाकर) ।
6. एक प्रश्न का दिया गया उत्तर सही / गलत लिखकर देना है।

नियमावली :

1. उत्तर लिखने वाले या उसके पारिवारिक सदस्य की भाव विज्ञान पत्रिका संबंधी आजीवन सदस्यता होनी अनिवार्य है।
2. एक परिवार से एक ही उत्तर पुस्तिका स्वीकार्य होगी ।अन्य नहीं।
3. प्रश्न पत्र के पेपर पर ही उत्तर लिखकर भेजें ।फोटो कॉपी मान्य नहीं होगी।
4. उत्तर पुस्तिका पर अंक देने का भाव उत्तर पुस्तिका में वर्णित उत्तरों की शुद्धता, लिखावट एवं उम्र पर निर्भर करेगा। अल्प उम्र वाले प्रतियोगी को प्रमुखता दी जावेगी।
5. बीस प्रश्नों में से एक सुनिश्चित प्रश्न का उत्तर कम से कम दो पंक्तियों में वाक्य सहित लिखना अनिवार्य है।
6. उत्तर लिखकर काट दिये जाने पर या घिस दिये जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।
7. उत्तर पुस्तिका की प्रतियोगी को एक फोटोकॉपी करवा लेना आवश्यक रहेगा क्योंकि मुख्य उत्तर पुस्तिका में कोई गलती न हो एवं अगली भाव विज्ञान पत्रिका में आने वाले उत्तरों का प्रतियोगी मिलान कर सके।

8. पत्रिका पहुँचने के पन्द्रह दिनों के भीतर उत्तर अवश्य प्रेषित करें। यहाँ से भेजने के समय से लेकर वापिस आने का समय एक माह है। एक माह के बाद प्राप्त उत्तर पुस्तिकाएँ प्रतियोगिता हेतु मान्य नहीं की जावेगी।

9. पुरस्कार निम्नानुसार होगें।

प्रथम पुरस्कार	:	**108 योग्य संख्यक मूल्य**
द्वितीय पुरस्कार	:	**72 योग्य संख्यक मूल्य**
तृतीय पुरस्कार	:	**57 योग्य संख्यक मूल्य**

10. पुरस्कार की राशि मनीआर्डर या बैंक आदि से भेजी जावेगी।
    प्रतियोगी प्राप्त मूल्य का उपयोग अपने तीर्थ वंदना, पूजा द्रव्य दान, आहार दान, औषधदान, उपकरण दान, पाठशाला की यूनिफार्म आदि धर्म कार्य के द्रव्य में सम्मिलित कर करें।

11. अगली भाव विज्ञान पत्रिका में सभी श्रेणियों के पुरस्कार विजेताओं के नाम प्रकाशित किये जावेंगे।

12. उत्तर पुस्तिका डाक/पोस्ट से निम्न पते पर प्रेषित की जानी चाहिए।

डॉ. प्रोफेसर सुधीर जैन

एफ 108/34, शिवाजी नगर, पाँच नंबर स्टाप के पास,

भोपाल (म.प्र.) 462 016

* **उपरोक्त प्रतियोगिता के बारे में हमारा उद्देश्य है कि बाल-युवा पीढ़ी भी स्वाध्याय के क्षेत्र में आगे बढ़े एवं घर-घर में चले धर्म संस्कार की पाठशाला।**

उत्तीर्ण प्रतियोगी परिचय

प्रथम श्रेणी

नितेश पाटनी
पिता श्री सुरेश पाटनी
अजमेर (राजस्थान)

द्वितीय श्रेणी

श्रीमती सरोज जैन
धर्मपत्नि श्री ताराचंद जैन
अजमेर (राजस्थान)

तृतीय श्रेणी

श्रीमती बबीता जैन
धर्मपत्नी श्री देवेन्द्र कुमार जैन
छतरपुर (म.प्र.)

उत्तर पुस्तिका - सितम्बर 2009

प्र. क्र. 1. चतुर्थकाल 2. तीर्थंकर मुनिसुव्रत 3. श्रीकृष्ण नारायण

4. प्रथम, द्वितीय, तृतीय व चतुर्थ अध्याय में जीव तत्त्व का पंचम में अजीव तत्त्व का, छठे व सातवें अध्याय में आस्रव तत्त्व का, आठवे में बंध तत्त्व का नवम् अध्याय में संवर व निर्जरा तत्त्व का तथा दशम अध्याय में मोक्ष तत्त्व का वर्णन है।

5. नहीं	6. नहीं	7. नहीं
8. नहीं	9. उमास्वामी	10. समन्तभद्र
11. पूज्यपाद	12. आचार्य वीर सेन	13. अजमेर
14. जर्मनी	15. चौरासी	16. तमिलनाडु
17. गलत (✕)	18. गलत (✕)	19. सही (✔)
20. सही (✔)		

भाव विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

समय : 15 दिन **अंक 100**

❉ 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं।

❉ इन प्रश्नों में से एक प्रश्न का उत्तर दो लाइनों में वाक्य सहित लिखना अनिवार्य है।

❉ उत्तर राष्ट्रभाषा हिन्दी में ही लिखें, लिखकर काटे या मिटाये जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।

सही उत्तर पर [✔] सही का निशान लगावें -

प्र. 1. प्रथम बालब्रह्मचारी तीर्थंकर कौन थे ?
तीर्थंकर वर्धमान [ ] तीर्थंकर पार्श्वनाथ [ ] तीर्थंकर वासुपूज्य [ ]

प्र. 2. कौन से तीर्थंकर तीन पदवी के धारक थे ?
तीर्थंकर अजितनाथ [ ] तीर्थंकर शान्तिनाथ [ ] तीर्थंकर नेमीनाथ [ ]

प्र. 3. हिंसा के वातावरण या मूक पशुओं की पुकार से कौन से तीर्थंकर वैरागी हुए ?
तीर्थंकर मल्लिनाथ [ ] तीर्थंकर आदिनाथ [ ] तीर्थंकर नेमिनाथ [ ]

प्र. 4. कौन से तीर्थंकर के काल में ढाई द्वीप में एक साथ एक सौ सत्तर तीर्थंकर थे ?
भगवान अजितनाथ [ ] भगवान अभिनन्दननाथ [ ] भगवान अरहनाथ [ ]

हाँ या ना में उत्तर दीजिये -

प्र.5. सिद्ध पद पाने के बाद मोक्ष होता है ? [ ]

प्र. 6. मुक्तात्मा धर्म द्रव्य के सहारे या निमित्त बिना आलोक में नहीं जाती है ? [ ]

प्र. 7. पंचम काल में भी प्रलय होता है ? [ ]

प्र. 8. पंचम काल के अंत तक भाव लिंगी मुनि होंगे ? [ ]

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

प्र.9. षट्खण्डागम शास्त्र के रचयिता .... थे।
[श्री वीरसेनाचार्य, श्री जिनसेनाचार्य, आचार्य श्री पुष्पदन्त, आचार्य श्री भूतबली]

प्र.10. उत्तर पुराण लिखने वाले .... थे
[आचार्य जिनसेन, आचार्य गुणभद्र, आचार्य रविषेण]

प्र.11. सम्यक्त्व सार शतक के रचयिता का नाम .... था।
[आचार्य श्री विद्यासागर जी, आचार्य श्री विवेकसागर जी, आचार्य श्री ज्ञानसागर जी]

कृपया यहाँ से निकालें

दो पक्तियों में उत्तर दीजिये -

प्र.12. आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज द्वारा रचित संस्कृत कृतियाँ कौन सी हैं ?

....

....

सही जोड़ी मिलायें - (कोष्ठक में नम्बर डालकर या लाइन मिलाकर)

प्र.13. आस्रव के कितने द्वार बंद करने वाले मुनिराज होते हैं ?	[ ]	1008	(1)
प्र.14. भरत चक्रवर्ती के द्वारा कैलाश पर्वत पर निर्मित स्वर्णिम जिनालयों की संख्या थी?	[ ]	57	(2)
प्र.15. सबसे बड़ी भगवान बाहुबली की प्रतिमा कितने फीट ऊँची है?	[ ]	72	(3)
प्र.16. भगवान तीर्थंकरों के कितने लक्षण होते हैं	[ ]	108	(4)

सही [✔] या [✕] गलत का चिन्ह बनाइये-

प्र.17. सम्यग्दर्शन में ग्रहों की पूजा अमान्य है। [ ]

प्र.18. चत्तारि शरणं में सब वीतराग पूज्य हैं [ ]

प्र.19. पञ्चम काल में जन्म के समय सम्यक्त्व होता है। [ ]

प्र.20. श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी से सम्राट चन्द्रगुप्त ने दिगम्बरी दीक्षा ली थी। [ ]

प्रतियोगी-परिचय

नाम .... उम्र ....

पिता/माता/पति का नाम ....

नगर या गाँव का नाम ....

पता ....

....

मोबाईल/फोन नं. ....

कृपया यहाँ से निकालें

कृपया यहाँ से निकालें

भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता हेतु आवेदन-पत्र

रंगीन फोटो

मैं ....

पिता/पति श्री ....

जिला .... प्रदेश ....से

भाव विज्ञान पत्रिका हेतु शिरोमणी संरक्षण 51000/- ☐ परम संरक्षक 21000/- ☐ सम्मानीय संरक्षक सदस्य रुपये 16,000/- ☐ संरक्षक सदस्य रुपये 5,100/- ☐ विशेष सदस्य रुपये 3,100/- ☐ आजीवन सदस्य 1,100/- ☐ राशि देकर आजीवन सदस्यता स्वीकार करता/ करती हूँ।

मेरा पत्र व्यवहार का पता :- ....

....

जिला .... प्रदेश ....

पिनकोड .... एस.टी.डी. कोड ....

फोन नम्बर .... मोबाईल ....

ई-मेल .... है।

दिनांक : हस्ताक्षर

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति .... पिता श्री ....

को शिरोमणी संरक्षक/परम संरक्षक/सम्मानीय संरक्षक/संरक्षक/विशेष सदस्य/आजीवन सदस्यता क्रमांक ... .प्रदान की जाती है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

नोट : (1) ''भाव विज्ञान'' भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंदौर, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत एस.बी. एकाउंट नं. **63016576171** में नगद राशि सीधे जमा कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित कर सदस्यता शुल्क की रसीद प्राप्त की जा सकती है।

(2) नियमित रूप से, प्रत्येक तीन माह में सही/परिवर्तित पते पर पत्रिका प्राप्त करने हेतु कृपया इस फार्म को पुनः भरकर प्रकाशक, ''भाव विज्ञान'', एम-8/4, गीतांजली काम्पलैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल- 462 003 (म.प्र.) को प्रेषित करें।

भाव विज्ञान परिवार

✶✶✶✶✶ शिरोमणी संरक्षक ✶✶✶✶✶

दानवीर, किशनगढ़

✶✶✶ परम संरक्षक ✶✶✶

श्री गौतम काला, राँची

✶✶ सम्मानीय संरक्षक ✶✶

श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, चैन्नई
श्री पदमराज होळल, दावणगेरे
श्री सोहनलाल कासलीवाल, सेलम
श्री संजय सोगानी, राँची
श्री आकाश टोंग्या, भोपाल
कु. इन्द्रसेना जैन, जयपुर
श्रीमती संगीता बजाज ध.प. श्री हरीश बजाज, टीकमगढ़
श्रीमती कमलाबाई अशोक जैन, साहबजाज, अजमेर
श्री नीरज सुपुत्र श्रीमती चन्द्रकला पाटनी, रांची
श्री बी.एल. पचन्ना, बैंग्लुरू

✶ संरक्षक ✶

श्री विजय अजमेरा, रीवा
श्री के. सी. जैन, डि. एक्साइज अधिकारी, छतरपुर
श्री एस.एल. जैन (बागड़िया), जयपुर

आजीवन नए सदस्य

95. श्री आई.सी. जैन, इन्दौर
96. स्व. डॉ. पी.सी. जैन, लखनऊ
97. श्री महावीर प्रसाद काला, अजमेर
98. श्रीमती सविता जैन, अजमेर
99. श्री स्वरूप जैन बज (जैन), किशनगढ़
100. श्री प्रकाशचंद पहाड़िया, देह, नागौर
101. श्री नवरतन दगड़ा, किशनगढ़
102. श्री सुरेश कुमार जैन (छावड़ा), किशनगढ़
103. श्री प्रकाशचंद गंगवाल, किशनगढ़
104. श्री ताराचंद जैन, किशनगढ़
105. श्री पदमचंद सोनी, किशनगढ़
106. श्री भागचंद जी दोषी, किशनगढ़
107. श्री भागचंद जी अजमेरा, अजमेर
108. श्री धर्मचंद जैन (पहाड़िया), किशनगढ़
109. श्रीमती स्नेहलता प्रेमचंद पाटनी, अजमेर
110. श्री रूपचंद छावड़ा, अजमेर
111. श्री सुरेशचंद पाटनी, अजमेर
112. श्रीमती चंद्रा पदमचंद सेठी, अजमेर
113. श्री चंद्रप्रकाश बड़जात्या, अजमेर
114. श्री भागचंद निर्मल कुमार जैन, अजमेर
115. श्री निर्मलचंद जी सोनी, अजमेर
116. श्री नरेन्द्र कुमार प्रवीण कुमार जैन, अजमेर
117. श्रीमती सरोज डॉ. ताराचंद जैन, अजमेर
118. श्रीमती आशा तिलोकचंद बाकलीवाल, अजमेर
119. श्री नवरतनमल पाटनी, अजमेर
120. डॉ. रतनस्वरूप जैन, अजमेर
121. श्रीमती निर्मला प्रकाशचंद जी सोगानी, अजमेर
122. श्रीमती निर्मला सुशील कुमार जी पांडया, अजमेर
123. श्रीमती शरणलता नरेन्द्रकुमार जैन, अजमेर
124. श्रीमती मंजु प्रकाशचंद जी जैन (काला), अजमेर
125. श्री संदीप बोहरा, अजमेर
127. श्री डी. भूपालन जैन, चैन्नई
128. श्री सी. सेल्वीराज जैन, चैन्नई
129. श्री राकेश कुमार जैन, अजमेर
130. श्री राजेन्द्र कुमार अजय कुमार दनगसिया, अजमेर
131. श्री पूरनचंद, देवेन्द्र, धीरेन्द्र कुमार (सुथनिया), अजमेर
132. श्री नाथूलाल कपूरचंद जैन, अजमेर
133. श्रीमती चांदकंवर प्रदीप पाटनी, अजमेर
134. श्री विनोद कुमार जैन, अजमेर
135. श्री नरेश कुमार जैन, अजमेर
136. श्री प्रसन्न जैन ''बन्टू'' छतरपुर
137. इंजीनियर श्री सुनील कुमार जैन, अजमेर
138. श्री चिरंजीलाल पाटोदी कुचामनसिटी
139. श्री सुरेश कुमार अमित कुमार पहाड़िया, कुचामनसिटी
140. श्री विनोद कुमार पहाड़िया, कुचामनसिटी
141. श्री लालचन्द पहाड़िया, कुचामनसिटी
142. श्री गोपालचंद प्रदीप कुमार पहाड़िया, कुचामनसिटी
143. श्री सुरेश कुमार पांडया, कुचामनसिटी
144. श्री सुन्दरलाल रमेश कुमार पहाड़िया, कुचामनसिटी
145. श्री संजय कुमार महावीर प्रसाद पांडया, कुचामनसिटी
146. श्री कैलाशचन्द प्रकाशचंद काला, कुचामनसिटी
147. श्री विनोद विकास कुमार झाँझरी, कुचामनसिटी
148. श्रीमती चूकीदेवी झाँझरी, कुचामनसिटी
149. श्री अशोक कुमार बज, कुचामनसिटी
150. श्री संतोष प्रवीण कुमार पहाड़िया, कुचामनसिटी
151. श्री वीरेन्द्र सौरभ कुमार पहाड़िया, कुचामनसिटी
152. श्री भंवरलाल मुकेश कुमार झाँझरी, कुचामनसिटी
153. श्री ओमप्रकाश शीलकुमार झाँझरी, कुचामनसिटी
154. श्री जिनेन्द्र कुमार जैन, अजमेर
155. श्रीमती उषा ललित जैन, अजमेर
156. श्री रमेश कुमार जैन, अजमेर
157. श्रीमती आशा जैन, अजमेर
158. श्री ताराचंद दिनेश कुमार जैन, अजमेर
159. श्री मनोज कुमार मुन्नालाल जैन, अजमेर
160. श्री ज्ञानचंदजी गदिया, अजमेर
161. श्री निहालचंद मिलापचंद गोटेवाला, अजमेर
162. डॉ. प्रो. पी.के. जैन, एमएएनआईटी, भोपाल

शरद पूर्णिमा पर ''दीक्षायतन शिलान्यास समारोह'', अजमेर

श्री अशोक पाटनी, आर.के. मार्बल्स, दीक्षायतन
शिलान्यास समारोह में ध्वजारोहण करते हुए

''दीक्षायतन''
आचार्य ज्ञानसागर ध्यान केन्द्र, अजमेर

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज पर आधारित
'विद्या से विद्याधर' प्रदर्शनी का अवलोकन करते हुए मुनिश्री

भावविज्ञान-सितम्बर ०९ अंक का विमोचन करते हुए
श्री अशोक पाटनी एवं डॉ. सुधीर जैन, प्रबंध सम्पादक

दीक्षायतन के महत्व पर प्रकाश डालते हुये मुनिश्री

उपस्थित श्रावकगण

रजि. क्रं. **MPHIN/2007/27127**

कुचामन सिटी में मुनिश्री

मुनिश्री का कुचामन सिटी आगमन

कुचामन सिटी में प्रवचन के दौरान मुनिश्री ससंघ

जैन स्कूल, कुचामनसिटी में विद्यार्थियों एवं शिक्षकों हेतु प्रवचन के दौरान मुनिश्री

कुचामन सिटी में प्रवचन के दौरान
भक्तगण

मुनिश्री से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए श्री कमल पहाड़िया, कोषाध्यक्ष (भाजपा, नागौर); श्री युनिसखान-पूर्व यातायात मंत्री, राजस्थान; श्री हरीश कुमावत, पूर्व विधायक एवं श्री गोरूराम कुमावत, नगर अध्यक्ष

पुण्यार्जक

सौजन्य से

श्री नीरज कुमार सुपुत्र श्री चंद्रकला पाटनी ध.प. स्व. श्री निर्मल जैन

मेसर्स एम.आर. शापी,

24, रन्धीर प्रसाद स्ट्रीट, अपर बाजार, राँची (झारखंड)

फोन : 0651-3290992, 2281342

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - श्रीपाल जैन 'दिवा,' एल-75, केशर कुंज, हर्षवर्धन नगर, भोपाल-3 (म.प्र.)